बाल स्वास्थ्य और बाल शिक्षा

सत्यपाल रुहेला

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

वैशाख 1908 ● अप्रैल 1986

मूल्य : 13.00 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

बिक्री केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

- सुपर बाज़ार (दूसरी मंज़िल), कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, बम्बई-400038
- 8, एसप्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069
- एल० एल० ए० ऑडिटोरियम, 736 अन्ना सलाई, मद्रास-600002
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम-695001
- 10-बी, स्टेशन रोड, लखनऊ-226019
- स्टेट आर्कियोलॉजिकल म्यूजियम बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500004

मुद्रक : [illegible]

आमुख

विचारकों, लेखकों, कवियों, धर्मगुरुओं व प्रबुद्ध नेताओं ने बालक की महानतम्, उच्चता, निर्मलता तथा आकर्षकता का बहुत गुणगान किया है :

1. कांट, डगलस, स्मिथ और वेगिन के शब्दों में, "इस संसार में पैदा होने वाला प्रत्येक बालक भगवान् का एक नया विचार है। एक सदैव तरोताजा रहने तथा चमकने वाली संभावना है।"

2. प्रसिद्ध जर्मन बाल शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल, "बालक को स्वयं-विकासोन्मुख होने वाला मानव पौधा मानते थे।" प्रसिद्ध इटालियन बाल शिक्षा-शास्त्री मोंटसरी के अनुसार, "बालक में सच्ची शांति का आवास होता है तथा उसकी मुस्कराहट ही सामाजिक प्रेम व उल्लास की आधार शिला है।"

3. रवीन्द्रनाथ टैगोर के शब्दों में, "बालक से बढ़कर और कोई अधिक पुरातन नहीं है। समय, काल, शिक्षा और परंपरानुसार मनुष्य में अनेकानेक परिवर्तन आये हैं, लेकिन बालक तो आज भी बिल्कुल वैसा ही बना हुआ है, जैसा कि हजारों लाखों वर्ष पूर्व था। वह परिवर्तनहीन, चिरकालीन आश्चर्यमय बालक लगातार युग-युगांतरों से मनुष्यों में पुनर्जन्म लेता रहा है, और तो भी वह उतना ही नूतन और कोमल, अनजान और मधुर है, जितना कि वह पहले दिन था।"

4. गांधीजी कहा करते थे, "अध्यापकों को बालकों के सामने सदैव प्रसन्न मुद्रा में ही उपस्थित होना चाहिए। यदि एक अध्यापक क्रुद्ध, कुन्द अथवा चिड़चिड़े स्वभाव को लेकर शाला में आता है, तो वह बालकों के प्रति अपने उत्तम व्यवहार को तो खराब कर ही रहा है, इसके अतिरिक्त उसके जन्मसिद्ध अधिकार प्रसन्नता को भी ठेस पहुंचाने का यत्न कर रहा है।"

5. डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के शब्दों में, "प्रत्येक बालक एक अनुभव है, उच्च जीवन में एक साहसी कार्य है, पुराने ढंग को बदलने और उसे नया बनाने का एक अवसर है।"

6. प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री जाकिर हुसैन के शब्दों में, "बच्चे को ईश्वर का अंश समझिए। न वह आपकी संपत्ति है और न वह आपका खिलौना है। वह तो आपके पास ईश्वर और मनुष्यता की एक धरोहर है।"

7. श्री सत्य सांई बाबा के अनुसार, "बालक एक छोटा-सा शैतान नहीं है, अपितु वह तो अमृतपुत्र, दिव्य आत्मा-स्वरूप एक अनजान व पवित्र आत्मा है, जो कि अपने देश की धनवान सांस्कृतिक व आध्यात्मिक धरोहर का उत्तराधिकारी है।"

उपर्युक्त सभी बहुमूल्य विचार बार-बार इसी बात पर जोर देते हैं कि बालक के महत्व और उसके अधिकारों को समझा जाए। अंतर्राष्ट्रीय बालवर्ष मंत्रालय, यूनिसेफ के निदेशक जोन ग्रुन ने ठीक ही कहा है कि आज संसार भर के सभी लोग बिना किसी कठिनाई के इस बात से सहमत हैं कि संसार बच्चे को जो कुछ वह दे सकता है उसका सर्वोत्तम रूप देने के लिए ऋणी है। बालक को विश्व के ध्यान का केन्द्र बनाने के लिए ही 1979 में अंतर्राष्ट्रीय बालवर्ष मनाया गया था। हम सभी भविष्य का संसार सुखमय चाहते हैं। हम यह भी जानते हैं कि आगामी बीस वर्षों मे आज के बालक ही राज्याध्यक्ष, मतदाता, नेता, उत्पादक, उपभोक्ता, सेनापति, सिपाही, कलाकार और शिक्षक आदि बनेंगे। अतः यह आवश्यक है कि बालकों के अधिकारों को समझा जाए और उनको प्रदान करने के लिए प्रत्येक देश व समाज में ठोस कार्यक्रम की क्रियान्विति हो।

लेखक ने बड़ी सूझबूझ के साथ बाल स्वास्थ्य और बाल शिक्षा तथ बच्चे की नैसर्गिक प्रवृत्तियों का बड़ा रोचक और शिक्षाप्रद वर्णन इस पुस्तक में किया है और हमे आशा है कि हमारे अन्य प्रकाशनों की भांति यह पुस्तक भी लोकप्रिय सिद्ध होगी। पुस्तक मे प्रयुक्त चित्रों के लिए हमे सूचना और प्रसारण मंत्रालय के फोटो प्रभाग से काफी सहयोग मिला है। इसके लिए हम उनके आभारी हैं।

सम्पादक

अनुक्रम

1. बाल अधिकार	...	1
2. अंधविश्वास, परम्पराएं और बाल-स्वास्थ्य	...	7
विवाह संबंधी कुप्रथाएं	...	7
जन्म संबंधी अनुचित मूल्य व कुप्रथाएं	...	8
परिवारों में पूर्व-शालीय व शालीय बालकों की देखभाल	...	11
3. बालकों का पोषण और भोजन	...	13
गर्भवती माता का पोषण और भोजन	...	13
गर्भवती स्त्री के लिए आवश्यक दैनिक संतुलित भोजन	...	15
नवजात शिशु का आहार	...	16
पूर्व-प्राथमिक शाला के शिशुओं का पोषण	...	21
4. बालकों की बीमारियां और बचाव	...	27
संक्रामक रोगों के संभावित चिह्न	...	31
सामान्य जुकाम के संभावित चिह्न	...	32
नेत्र संबंधी रोगों के संभावित चिह्न	...	32
सुनने में संभावित कठिनाइयों के कुछ चिह्न	...	32
बोलने संबंधी संभावित कठिनाइयों के कुछ चिह्न	...	33
भावनात्मक और व्यवहार संबंधी स्वास्थ्य समस्याओं के चिह्न	...	33
कुपोषण की संभावित कमियों के कुछ चिह्न	...	34
दांतों के स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के कुछ चिह्न	...	34
भारतीय बालकों को होने वाले रोग	...	34
पोलियो क्या है ?	...	44
आंखें दुखना या आंखें आना	...	47
डायरिया का नया इलाज : मुख द्वारा पुनर्जलीकरण	...	50
बच्चों का रोगों से बचाव	...	52
प्रतिरक्षण	...	56
खाद्य पदार्थों में मिलावट से होने वाले रोग	...	59
पाठशालाओं में स्वास्थ्य शिक्षा	...	63

5. बालकों की स्वच्छता, स्वास्थ्य रक्षा और व्यायाम ... 65
स्वच्छता ... 65
स्वास्थ्य रक्षा ... 67
आसन ... 70
व्यायाम ... 71
6. विकलांग बालक ... 72
विकलांगता के प्रमुख कारण ... 74
विकलांग बालकों की समस्याएं ... 75
संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा घोषित विकलांग लोगों के अधिकार ... 78
विकलांगता की रोकथाम ... 79
7. बालक की प्रकृति ... 80
बालक की प्रकृति के बारे में आधुनिक विचार ... 81
8. बाल-शिक्षा : मूलभूत विचारबिन्दु ... 88
भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा ... 94
विश्व में बाल-शिक्षा की वर्तमान स्थिति ... 100
9. बालकों में आदतों, मूल्यों, रुचियों और क्रियात्मकता का विकास ... 102
मूल्यों का विकास ... 104
रुचियों का विकास ... 105
बालकों में क्रियात्मकता का विकास ... 105
10. बालकों का मनोरंजन और उनकी शिक्षा ... 109
कहानी ... 109
संगीत ... 111
पहेली ... 128
खेलकूद ... 129
नृत्य ... 131
चित्रकारी ... 131
अन्य सृजनात्मक क्रियाएं ... 131

अध्याय-1

बाल-अधिकार

यह आश्चर्यजनक एवं खेदपूर्ण तथ्य है कि बालकों की संख्या का एक बडा भाग सदैव से ही अभावग्रस्त और दुखपूर्ण जीवन बिताता आया है। एक शताब्दी पूर्व अधिकतर लोगों को यह देख कर कोई दु:ख का आभास नही होता था कि अनेक बालकों को अपने पेट भरने के लिए कई घंटो तक तथा बहुत कठिन परिस्थितियो में स्वयं काम करना पड़ता था। लोग यह मानकर चलते थे कि पैदा हुए बालको में से अधिकांश को युवावस्था प्राप्त करने से पूर्व ही मर जाना पडेगा।

दुर्भाग्यवश आज भी में लगभग तीन-चौथाई बालको को निर्धनता, भूखमरी, अल्पाहार, कुपोषण एवं बीमारी के कारण युवावस्था प्राप्त होने से पूर्व ही मृत्यु को प्राप्त होने का खतरा बना हुआ है। कई देशो मे आज भी बालकों को कोई चिकित्सा सुविधा प्राप्त नही है। उन्हे शिक्षा व मनोरंजन की सुविधाएं भी प्राप्त नहीं हैं तथा उन्हे कोई कानूनी संरक्षण भी नही मिला हुआ है। बालकों की स्थिति संसार भर में तथा विशेषकर भारत में कितनी खराब और शोचनीय है, जो यूनिसेफ द्वारा प्रस्तुत निम्नलिखित तथ्यों से विदित है :—

1. विश्व में प्रतिवर्ष 5 लाख बच्चे पोलियो के शिकार हो जाते हैं, जबकि पोलियो वेक्सीन की बीस खुराकों की कीमत दस रुपये से अधिक नहीं होती।
2. 1981 में विश्व मे प्रतिदिन 500 बच्चो ने अपनी नेत्र ज्योति खो दी थी, जबकि कुछ पैसों की विटामिन 'ए' गोलियां उस अंधता को रोक सकती थीं।
3. औद्योगिक देशों में जन्म लेने वाले एक हजार बच्चों में से औसतन 15 बच्चे शीघ्र ही मर जाते हैं—निर्धन अफ्रीकी और एशियाई

देशो में यह संख्या 129 तक पहुंच गयी है, जबकि भारत में पैदा होने वाले प्रति एक हजार बच्चों में से 122 मर जाते हैं।

4. गंदा पानी पीने से भारत में प्रतिवर्ष लगभग 32 लाख बच्चे मर जाते हैं।

5. भारत में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चो की संख्या 22.5 करोड़ है, जिनमें से लगभग 13.3 करोड़ बच्चे 6 वर्ष से कम हैं। ग्रामीण क्षेत्रों मे रहने वाले लगभग 55 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रो मे रहने वाले 45 प्रतिशत बच्चे कुपोषण की समस्या से ग्रस्त हैं। इनमे से लगभग 25 प्रतिशत तो गंभीर कुपोषण के शिकार हैं और अनेक मामलो मे वे स्थायी रूप से शारीरिक और मानसिक दृष्टि से अपंग हो जाते हैं। उदाहरण के लिए विटामिन 'ए' और 'डी' की कमी ही बच्चों में अंधेपन के 25 प्रतिशत मामलों के लिए जिम्मेदार है।

6. डायरिया और डिहाइड्रेशन से विकासशील देशों में प्रतिवर्ष 50 लाख बच्चे मौत का ग्राम बन जाते हैं। खसरा, डिप्थीरिया, पोलियो और टी० बी० से भी प्रतिवर्ष 50 लाख बच्चे और मर जाते हैं।

7. बचपन के संक्रामक रोग जैसे खसरा, टिटेनस, काली खांसी, डिप्थीरिया, पोलियो और टी० बी० कुल मिलाकर प्रति छः मिनट मे एक बच्चे को मौत के मुंह मे धकेल देते हैं। इन सब बीमारियो से बच्चे को बहुत ही कम राशि अर्थात् लगभग 5 डालर (लगभग 50 रु०) प्रति बच्चा दवाइयो पर व्यय कर बचाया जा सकता है।

8. भारत में पाठशाला में पढ़ने जाने वाले बालकों का अनुमानित प्रतिशत निम्नांकित है :—

आयु वर्ग	प्रतिशत
3-6 वर्ष	5%
6-11 वर्ष	80·9%
11-14 वर्ष	37·0%
14-17 वर्ष	20·9%

पहली कक्षा में भर्ती होने वाले प्रत्येक 100 बालकों में से आधे से भी कम पांचवीं कक्षा पूरी कर पाते हैं और केवल 24 बालक आठवीं कक्षा पूरी कर पाते हैं।

9. भारत मे 1971 की जनगणना के अनुसार 1.51 लाख भिखारी या आवारा बालक थे।

10. भारत मे 30 लाख बालक किसी-न-किसी प्रकार से बाधित हैं।

11. लगभग 5% (अर्थात् 10.30 लाख) भारतीय बालकों को अपना पेट भरने के लिए काम करना पड़ता है। इस प्रकार भारत विश्व-भर मे बाल-श्रमिक जनसंख्या में सबसे आगे है।

12. केन्द्रीय स्वास्थ्य ब्यूरो, स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार के निदेशक डॉ० बी०सी० घोषाल के एक लेख में दिये गये निम्नांकित तथ्य चौंका देने वाले हैं :—

—80 से 90% भारतीय बालकों को पर्याप्त मात्रा में विटामिन और लवण खाने को नही मिलते। 75% बालकों को पर्याप्त कैलोरी नहीं मिल पाती। लगभग 50% बालको को पर्याप्त प्रोटीन नही मिल पाता।

—लगभग 22% पाठशाला जाने वाले बालकों मे कुपोषण के एक या अधिक चिन्ह देखने में आते हैं।

—भारत में होने वाली कुल मौतों मे से 40% मौत कुपोषण के कारण होती हैं।

13. डॉ० घोषाल के अनुसार भारत में 20 लाख बालक मानसिक रूप से बाधित हैं। 5 लाख बालक लले-लंगड़े और 2 लाख बालक बधिर हैं। इनमें वे बालक सम्मिलित नही हैं, जो आंशिक रूप से या मामूली रूप से बाधित हैं और जिनकी एक बहुत बड़ी संख्या है। देश मे इस समय केवल 4% शारीरिक रूप से बाधित बालकों के लिये तथा 2% मानसिक रूप से बाधित बालकों के लिए ही चिकित्सा की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

14. प्रो० के० बी० गंगराड़े ने अपने एक लेख में बताया है कि 1971 की जनगणना के अनुसार भारत में 15 वर्ष से कम आयु के बाल-श्रमिकों की कुल संख्या एक करोड़ 7 लाख 40 हजार थी, जो कि भारत की कुल श्रमिक जनसंख्या का 5.9% थी।

—1981 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल बाल-जनसंख्या 25 करोड़ 50 लाख में से 11 करोड़ 80 लाख (ग्रामीण क्षेत्रों के 9 करोड़ 90 लाख तथा शहरी क्षेत्रों के एक करोड़ 90 लाख) बालक निर्धनता की रेखा के नीचे हैं।

—1983 में उत्पन्न होने वाले 2.3 करोड़ भारतीय बच्चों में से अनुमानतः 30 लाख बच्चे तो अपने जीवन के प्रथम वर्ष में ही मर गये तथा मुश्किल से 30 लाख बच्चे, वास्तव मे, स्वस्थ, शारीरिक रूप से समर्थ, उत्पादक व बौद्धिक रूप से सम्पन्न नागरिक बन पायेंगे।

—1958 मे 84.5% भारतीय बालिकाएं 15 वर्ष की आयु से कम की होने पर भी ब्याह दी गई थी। 1971 की जनगणना के अनुसार 4,426 ऐसी बालिकाएं ब्याही गई थी।

—बाल सरक्षण कानूनों की अवज्ञा करते हुए अकेले दिल्ली शहर में लगभग 60 हजार बच्चे ढाबो-भोजनालयों मे मजबूरी के कारण काम पर लगे हुए है।

15. 1981 की जनगणना के अनुसार भारत में केवल 25% स्त्रिया व 47% पुरुष साक्षर हैं।

16 भारत मे 10-14 वर्ष की आयु-समूह मे लगभग 30% लड़के व 20% लड़कियां श्रमिक हैं। 5-9 वर्ष की आयु-समूह में दोनों लिगों के श्रमिको की सख्या 2.3% है।

17. अनुमानतः भारत में विभिन्न सामाजिक व आर्थिक कारणों से प्रति वर्ष पैदा होने वाले 2.1 करोड़ बालकों में से 10 लाख बालकों को फेंक दिया जाता है।

उपरोक्त तथ्य बहुत गंभीर हैं। बालकों पर किये गये और किये जा रहे अपराधों, अत्याचारो, यौनाचारों, दुर्व्यहारों आदि के आंकडे हमने प्रस्तुत नहीं किये हैं। फिर भी कुल मिलाकर, यह भली-भांति अनुमान लगाया जा सकता है कि विश्व भर में, विशेषकर भारत जैसे विकासशील व निर्धन देशों में, बालको की स्थिति कितनी खराब है।

इस संदर्भ मे बालको के अधिकारो की बात सोचना और उनके प्रति अपने दायित्वों को निभाना बहुत ही आवश्यक हो जाता है।

20 नवम्बर 1959 को सयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा मे 78 देशो के प्रतिनिधियों की एक बृहद् सभा ने बालक के अधिकारों का एक घोषणा-पत्र सर्वसम्मति से पारित किया था। उक्त घोषणा-पत्र के अनुसार सभी बालकों को निम्नांकित अधिकार पाने का हक है :—

1. बिना किसी प्रजाति, रंग, लिंग, धर्म या राष्ट्रीय भेदभाव के सभी बालको को उक्त घोषणा-पत्र में अंकित अधिकारो का उपभोग करने का अधिकार है।

2. उनको उन सभी विशेष सरक्षणों, अवसरो और सुविधाओ को पाने का अधिकार है, जो उन्हें स्वाधीनता और सम्मान मे एक स्वस्थ और सामान्य ढंग से विकसित होने मे समर्थ बनायें।

3. उनमें से प्रत्येक को यह अधिकार है कि उसका एक नाम हो और राष्ट्रीयता हो।

4. उन्हें सामाजिक सुरक्षा पाने का अधिकार है, जिसमे पर्याप्त पोषण, आवास, मनोरंजन तथा चिकित्सा सेवाएं शामिल हैं।

5. यदि वे बाधित अथवा अपंग हैं, तो उन्हे विशेष चिकित्सा, शिक्षा व देखभाल पाने का अधिकार है।

6. उन्हें प्रेम, सद्भाव, प्यार और सुरक्षा के वातावरण को, यथासंभव अपने माता-पिता की देखभाल और जिम्मेदारी मे पाने का अधिकार है।

7. उन्हें निःशुल्क शिक्षा, मनोरंजन तथा अपनी वैयक्तिक क्षमताओं को विकसित करने के लिये समान अवसर पाने का अधिकार है।
8. विपत्तिकालों में उन्हें तुरंत सुरक्षा और राहत पाने का अधिकार है।
9. उन्हें सभी रूपों में बहिष्कार, क्रूरता और शोषण के विरुद्ध सुरक्षा पाने का अधिकार है।
10. उन्हें किसी भी प्रकार के प्रजातीय, धार्मिक और अन्य प्रकार के भेदभाव से सुरक्षा पाने तथा शांति और विश्व-बंधुत्व की एक भावना में पाले-पोसे जाने का अधिकार है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के उपर्युक्त बाल अधिकार घोषणा-पत्र का सारे विश्व में खूब प्रचार हुआ है। सभी देशों ने उसे सम्मान पूर्वक माना है और अपनाया है। भारत ने भी इसे माना है। 1979 में मनाये गये विश्व बाल-वर्ष में उक्त घोषणा-पत्र के दस सिद्धांतो के अनुसार सभी देशों मे ठोस कार्य किये गये हैं, जिनसे बालकों के स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रसन्नता, सुरक्षा के स्तरों को सुधारा जाए। यूनेस्को, यूनिसेफ, एफ० ए० ओ० व अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं तथा देशों मे विभिन्न शैक्षणिक व सांस्कृतिक संगठन बालकों को इन अधिकारों को उपलब्ध कराने की दिशा मे कार्य कर रही हैं। कई देशो मे, जिनमे भारत भी सम्मिलित है, बालकों की भलाई के लिए नए कानून बने हैं और पुराने कानूनों मे सुधार हुआ है। बालकों के प्रति स्नेह व सम्मान के साथ व्यवहार करने की आवश्यकता को अब और अधिक अच्छी तरह से समझा जा रहा है। यूनिसेफ की प्रेरणा और मदद से विश्व भर मे बालकों के स्वास्थ्य पोषण और शिक्षा के स्तरों मे चमत्कारी सुधार व परिवर्तन लाने का प्रयास किया जा रहा है।

सभी शिक्षकों, माता-पिताओ तथा प्रबुद्ध नागरिको का यह परम कर्त्तव्य है कि वे बालको के इन अधिकारों को भली-भांति समझें, उन्हें प्रसारित करें तथा सभी बालको को उन्हें प्राप्त करने में मदद करें।

अध्याय-2

अंधविश्वास, परम्पराएं और बाल स्वास्थ्य

भारतीय समाज में निर्धनता, अशिक्षा तथा पुराने अंधविश्वासों के कारण ऐसी कई परम्पराएं, रीतिरिवाज और गलत प्रकार की सामाजिक कुरीतियां तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी अनुचित रिवाज का प्रचलन है, जिनसे बालकों के स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में हानिकारक प्रभाव पड़ता है। आधुनिक विज्ञान की शिक्षा तथा बाल-स्वास्थ्य सम्बन्धी शोध-जानकारी से अब इन अंधविश्वासों, कुरीतियों और हानिकारक परम्पराओं को जाना जा रहा है और इनको समाप्त करने की दिशा में लोगों में जागरूकता पैदा करने के प्रयास किये जा रहे हैं।

हमने भारतीय समाज में प्रचलित ऐसी हानिकारक परम्पराओं, कुरीतियों और अंधविश्वासों को सर्वेक्षण द्वारा संकलित करने का प्रयास किया है। उन्हें निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा सकता है :—

विवाह संबंधी कुप्रथाएं

दक्षिणी भारत की कुछ जातियों में बहुत ही निकट के संबंधियों जैसे—मामा की लड़की, बुआ के लड़के, चाचा की संतानों आदि से विवाह होने की पुरानी परम्पराएं हैं। शोध अध्ययनों से पता लगा है कि ऐसे विवाहों से उत्पन्न होने वाली संतानों में शारीरिक-दोष अधिक होते हैं, जैसे हाथ और पैरों में छः-छः उंगलियों का हो जाना, कमजोर संतान का उत्पन्न होना आदि।

राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात आदि राज्यों के ग्रामों में अभी तक बड़ी संख्या में बाल-विवाह होने वाले बालक-बालिकाओं के शारीरिक, मानसिक व सामाजिक विकास पर बुरा प्रभाव पड़ता है और उनकी संतानें बहुत कम आयु

में पैदा होने लगती हैं। इससे कमजोर और कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त बच्चे उत्पन्न होते हैं और बच्चा और जच्चा दोनों की मृत्यु-दरें बहुत अधिक रहती हैं।

साली-विवाह और भाभी-विवाह की प्रथाओं के कारण प्रायः बेमेल विवाह होते हैं—पुरुष की आयु बहुत अधिक होती है और स्त्री की आयु उससे बहुत कम। फलस्वरूप वृद्धावस्था की संतानें प्रायः शारीरिक रूप से कमजोर होती हैं तथा उनके बचपन में ही पिता के मरने की संभावनाएं अधिक होती हैं। उसका परिणाम होता है कि बच्चों को बचपन में आवश्यक देखभाल, पोषण, सुख-सुविधा नहीं मिल पाती, उन्हें मानसिक अस्वस्थता का शिकार होना पड़ता है तथा उनका स्वास्थ्य खराब रहता है।

मुसलमानों तथा कुछ अन्य हिन्दू जातियों व जनजातियों में बहुपत्नी विवाह की प्रथा है, जिसके फलस्वरूप परिवार में कई पत्नियों से बहुत से बच्चे पैदा होते हैं। उनको उचित मात्रा में पोषण, स्वास्थ्य सम्बन्धी देखभाल व लाड़-प्यार नहीं मिल पाता और वे अस्वस्थ रहते हैं।

जन्म-सम्बन्धी अनुचित मूल्य व कुप्रथाएं

भारतीय समाज में (विशेषकर हिन्दुओं, जैनों व सिक्खों में) पुत्र के जन्म को तो बहुत हर्षोल्लास से मनाया जाता है, जबकि पुत्री के जन्म पर माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्यों में निराशा घर कर लेती है। यह हमारी गलत सामाजिक मूल्यों की देन है। कई जातियों व कई क्षेत्रों से यह सूचना प्रायः मिलती रहती है कि उनमें कन्या को जन्म के बाद यथाशीघ्र ही अफीम, जहर अथवा कुपोषित भोजन या जानबूझकर बरती गई असावधानी से मार दिया जाता रहा है। वैसे ही हमारे देश में अब पुरुषों की संख्या बढ़ रही है, उनके अनुमान में स्त्रियों की संख्या काफी कम होती जा रही है। यूनिसेफ द्वारा प्रकाशित 'चाइल्ड एटलस ऑफ इण्डिया' (1981) में बतलाया गया है कि 1981 की राष्ट्रीय जनगणना के आधार पर जनगणना का औसत प्रति हजार पुरुषों पर केवल 935 स्त्रियां हैं। अण्डमान-निकोबार द्वीप में औसतन 761 स्त्रियां, चण्डीगढ़ संघ-शासन में 770 स्त्रियां, दिल्ली में 810 स्त्रियां,

नागालैंड में 867 स्त्रियां प्रति हजार पुरुष हैं। ऐसी स्थिति मे कन्यावध अथवा पुराने दकियानूसी सामाजिक मूल्यो से प्रभावित होकर कन्याओं को कुपोषण, लापरवाही अथवा विद्वेषपूर्ण व्यवहार से मरने देना निसंदेह घोर निन्दनीय व घृणित कृत्य है।

सामान्यतः देखने मे आता है अधिकांश भारतीय परिवारों में लड़को को खूब पौष्टिक, ताजा व अधिक भोजन खाने को दिया जाता है और बीमारी पर उनका इलाज भी तुरन्त व यथाशक्ति जितना अधिक हो सकता है, करवाया जाता है, लेकिन लड़कियो को कम पौष्टिक, बचा-खुचा, गला-सड़ा, बासी व कम भोजन दिया जाता है और उनके इलाज की ओर माता-पिता प्राय. लापरवाही बरतते हैं। फलस्वरूप बालिकाओं का स्वास्थ्य प्रायः खराब रहता है।

बालक के जन्म पर कई प्रकार के अंधविश्वास व प्रथाएं मानी जाती हैं, जो न केवल अतार्किक अपितु हानिकारक भी है। बच्चे के जन्म-नाल को प्रायः लोहे के चाकू या हंसिया से काटा जाता है, जिससे बच्चे को भूतप्रेत न सताए। लेकिन उस चाकू को उबाले हुए पानी मे पूर्ण रूप से संक्रमण विहीन नही किया जाता। फलस्वरूप चाकू की जंग से टिटेनस बीमारी के कीटाणु नवजात शिशु को लग जाते हैं और बड़ी संख्या मे शिशु मर जाते है, नाल को तुरन्त काट कर घर के आंगन में ही गाड दिया जाता है, अज्ञानतावश उसे गंदा व अनुपयोगी माना जाता है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि जन्म-नाल मे जीवन-पोषक बहुमूल्य पदार्थ होते है, अत नाल काटते समय जच्चा के पलंग से बालक को नीचे करके नाल को सूत कर (ताकि नाल के भीतर का अधिक लोहयुक्त रक्त बच्चे के शरीर मे न चला जाये) तब उसे भली भांति उबाले गए चाकू से काटा जाना चाहिए।

अधिकांश ग्रामीण परिवारों में जन्म-नाल को काटने के बाद बच्चे के शरीर पर जो नाल का थोड़ा-सा अंश लटका रहता है, उस पर गोबर या काली मिट्टी लगाते हैं। इससे टिटेनस के कीटाणु नवजात शिशु के शरीर मे प्रवेश कर जाते हैं। इसीलिए अनेक शिशुओं की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है। अधिकांश परिवारो में रिश्तेदार व आस-पड़ोस के लोग प्रथा के अनुसार जन्म लेने वाले बच्चे को देखने व माता-पिता को बधाई देने आते है और

बच्चे को चूमते हैं, इससे बच्चे में दूसरों का बीमारियों के कीटाणु प्रवेश कर जाते हैं और उसे संक्रमण हो जाता है।

केरल के कई परिवारों में यह रिवाज है कि जन्म लेने के तुरन्त बाद कमरे के किवाड़ बंद करके बहुत जोर का शोर किया जाता है या बाजा बजाया जाता है, जिससे बच्चा बहादुर बन सके। लेकिन ऊंचे शोर के कारण बालक के कान के कोमल पर्दे के फटने का भय रहता है।

केरल व अन्य कई राज्यों में शिशुओं को जन्म के समय शहद चटाया जाता है, लेकिन एक दिन तक कुछ भी दूध नहीं देने का रिवाज है। आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र के अनुसार शिशु को जन्म के बाद 5-6 घंटे से अधिक तो किसी भी हालत में भूखा नहीं रखना चाहिए, अन्यथा उसके रक्त में चीनी की कमी हो जाने के कारण उसके मस्तिष्क को हानि हो सकती है।

नजर से बचाने के विचार से शिशु की आंखों में प्रायः काजल-सुरमा लगाते हैं, उससे जस्ते का जहर फैलने का भय रहता है, जो आंखों के लिए हानिकारक है।

जच्चा को घी खूब खिलाया जाता है, लेकिन फल, सब्जी और दूध आदि बहुत कम दिया जाता है। इससे उसे संतुलित भोजन न मिलने से उसका व बच्चे का अथवा दोनों का स्वास्थ्य खराब हो सकता है।

कई परिवारों में यह रिवाज है कि बच्चे को जन्म के तुरन्त बाद नहलाया जाता है। ऐसा करने से नवजात शिशु के शरीर के चर्म पर जो 'केसेओसा' नामक बचाव करने वाला प्राकृतिक पदार्थ होता है, वह धुल जाता है और कई बार शिशु को आंख, कान या नाक का छूत लग जाती है।

कई परिवारों में यह रिवाज है कि बच्चे को अरण्डी का तेल, देशी दवा-दारू, घुट्टी या थोड़ी-सी अफीम दस्तावर के रूप में दी जाती है, जिनका बालक पर बुरा टॉक्सिक प्रभाव हो सकता है। शिशु को नामकरण संस्कार होने तक नये वस्त्र नहीं पहनाए जाते बल्कि बुजुर्गों के फटे-पुराने कपड़ों से बनाए गये वस्त्र पहनाए जाते हैं, ताकि भूत-प्रेत नजर से उसको बचाया जा सके। पुराने वस्त्र पहनने में मुलायम तो होते हैं, जो ठीक है, लेकिन भलीभांति उबालकर धुले बिना पहनने से, उनमें कई बीमारियों के कीटाणु हो सकते हैं, जो शिशु

को बीमार कर सकते हैं। शिशु को को तंग टोपी, पाजामा, कुर्ता आदि पहनाने से उसके अंगों के विकास में बाधा पड़ती है।

कई फैशनेबिल माताएं, इस विचार से कि उनका नारी-सौन्दर्य अपने स्तन-पान कराने से कम न हो जाये, जन्म के समय से ही बच्चे को ऊपर का बोतल का दूध व डिब्बों के कृत्रिम आहार देना शुरू कर देती हैं। इससे बच्चे के संक्रामित व कुपोषित होने तथा शीघ्र ही मर जाने का भय रहता है।

जच्चा और बच्चा को घर की कात कोठरी मे कई दिनों तक बंद रखा जाता है, जहां वायु व प्रकाश नही पहुंचता तथा कार्बन डाइआक्साइड की प्रचुरता रहने से उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। देशी दाइया प्राय: गंदगी के खतरो को भली-भांति नहीं समझती, सभी प्रकार के प्रसव वैज्ञानिक ढंग से कराना नहीं जानती। इसलिए उनकी भूलों व मूर्खताओं से हजारो जच्चाओं व शिशुओं की जानें चली जाती हैं।

परिवारों में पूर्व-शालीय व शालीय बालकों की देखभाल

अधिकांश भारतीय परिवारों के बालकों को माता-पिता अपना जूठा खाना खाने और जूठा पानी पीने को दे देते हैं। बच्चों को बासी खाना खाने को दे दिया जाता है। आजकल टॉफियो और मीठी गोलियों, बबलगम आदि देने का फैशन जोर पकड़ गया है, जिनमें हानिकर रंग व गंदे पदार्थ होते हैं। बालकों के दांत और गले खराब हो जाते हैं। नर्सरी, प्राथमिक व माध्यमिक शालाओं के आसपास चूरन, चटनी, कटे हुए फल, गुब्बारे, सस्ते व गंदे टॉक्सिक युक्त प्लास्टिक के खिलौने, सीटियां आदि बेचने वाले मंडराते रहते हैं, जो बच्चों के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करते हैं। गंदी आइसक्रीम व बर्फ, फल व चाट बेचने वाले बच्चों को ललचाते रहते हैं और उनके स्वास्थ्य का नाश करते हैं।

अज्ञानता और अशिष्टता के कारण बच्चो को उनके माता-पिता यह नहीं सिखाते कि खाने से पहले हाथ धोएं, नाखून छोटे व साफ रखें, बाल साफ रखें, नियमित रूप से नहाएं, गंदे नदी-नालों में न नहायें, गंदा पानी न पीयें, खुली जगह में पाखाना न करें, गंदी जगहो में नंगे पाव न घूमे। इन कारणों

से बालकों का स्वास्थ्य टिटेनस, डायरिया और चर्म रोगों आदि के द्वारा खराब होता रहता है।

कई गंदी बस्तियों के बच्चे कूड़े-करकट के ढेरों पर नंगे पाव घूमते रहते हैं, जो उन्हें कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त कर देते हैं। अधिकांश परिवारों मे संतुलित भोजन क्या होता है इसकी जानकारी नही होती, अत: बच्चो को कुपोषण का शिकार हो जाना पड़ता है। घरो मे एक ही तौलिये से सभी नहाते-पोंछते हैं, जिससे बच्चों को आखो व चर्म के रोग हो जाते है। एक-दूसरे के कपड़े बच्चों को पहना दिये जाते हैं, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुचित है। कई परिवारो मे बच्चों के सामने माता-पिता तम्बाकू, बीड़ी-सिगरेट, शराब, अफीम, गांजा, चरस आदि का सेवन करते हैं। उनकी देखादेखी बच्चे भी उनका सेवन करने लगते हैं और अपने स्वास्थ्य व चरित्र को बिगाड़ लेते हैं।

निम्न वर्ग के परिवारों मे प्राय: बच्चों को बुरी तरह से मारा-पीटा जाता है, जिससे कई बार उनके कानो, मस्तिष्क, आंखो, हाथ-पांव को चोट लगती है। अधिकतर बालकों को अभावो व चिन्ता के वातावरण मे रखा जाता है, जिससे उनका मानसिक स्वास्थ्य खराब हो जाता है और शारीरिक स्वास्थ्य पर भी उसका बुरा प्रभाव पड़ता है। अधिकतर भारतीय स्त्रियों को बच्चो का स्वस्थ लालन-पालन कैसे करे, यह जानकारी नही होती।?

आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न क्षेत्रों में बाल-स्वास्थ्य सम्बन्धी अवस्थाओं व सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यो व रीतिरिवाजों का भली-भांति सर्वेक्षण करके क्षेत्र-विशेष के लिए उपयुक्त कार्यक्रम बनाये जाएं।

अध्याय-3

बालकों का पोषण और भोजन

एक चीनी कहावत है, "जन्म के समय बच्चा नौ माह का होता है।" इसका अर्थ यही है कि जन्म से पूर्व भी बच्चे के पोषण और भोजन का ध्यान रखना आवश्यक है। उस समय वह माता के गर्भ में होता है और वहां माता के शरीर से ही अपनी खुराक पाता है। अतः जब हम बालक के पोषण और भोजन की चर्चा कर रहे हैं, तो सबसे पहले गर्भवती माता के पोषण और भोजन की चर्चा करना आवश्यक हो जाता है।

गर्भवती माता का पोषण और भोजन

गर्भवती माता जो भोजन ग्रहण करती है, उससे दो जीव पलते हैं—वह स्वयं और उसके गर्भ मे स्थित बच्चा। अतः उसे ऐसा भोजन ग्रहण करना चाहिए जो स्वयं के लिए तथा बच्चे के लिए उपयुक्त हो। गर्भ के तीसरे माह से बालक के अंगों का निर्माण होने लगता है, अत. उस समय उसे शक्तिदायक हल्का और सुपाच्य भोजन करना चाहिए। उसे गहरे हरे रंग की पत्तियों की सब्जियां, पीले फल और दूध का अधिक-से-अधिक सेवन करना चाहिए, ताकि बालक के शरीर और मस्तिष्क दोनों का भली-भांति विकास होता रहे और वह सुगमतापूर्वक स्वस्थ बालक को जन्म दे सके और जन्म के बाद स्वयं भी स्वस्थ रह सके। गहरे रंग की सब्जियों में लोहा प्रचुर मात्रा मे होता है जो रक्त बनाता है। पीले फल विटामिन 'ए' से भरपूर होते है, जो शरीर को शक्ति देते हैं। दूध मे प्रोटीन होता है। मांस, अण्डों, सोयाबीन, सूखे मेवों, मछली, दालों आदि मे बहुत प्रोटीन होते हैं, अतः उनका प्रयोग करना चाहिए जिससे बालक का मस्तिष्क भली-भांति विकसित हो।

गर्भवती माता के पोषण व भोजन के सम्बन्ध में निम्नांकित महत्वपूर्ण

बातों पर यूनिसेफ, एफ० ए० ओ० आदि अनेक अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय संस्थाओं तथा शोध कर्ताओं ने बहुत बल दिया है :—

1. गर्भवती माता को अपने सामान्य भोजन से अधिक खाना खाना चाहिए। उसे विभिन्न प्रकार के पौष्टिक भोजन खाने चाहिए, लेकिन यदि ऐसा सम्भव न हो, तो जो खाना वह प्राय. खाती है, उसकी अधिक मात्रा खानी चाहिए। हमारे देश मे प्रायः यह गलत धारणा प्रचलित है कि गर्भवती स्त्री को अधिक घी और अनाज खाना चाहिए न कि अधिक भोजन। वास्तव में उसे प्रोटीन, चूना (कैल्शियम), लोहा, विटामिनयुक्त भोजन करना चाहिए। ये तत्व उसे निम्नांकित तालिका मे प्रस्तुत भोज्य वस्तुओं में प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं :—

प्रोटीन—दूध, मांस, मछली, अंडे, पनीर, चने, अरहर, मटर, राजमा, मूंग, सोयाबीन, अंकुरित दालें, अंकुरित अनाज, मूंगफली।

चूना—दूध, अमरूद, मछली, दालें, तिल।

लोहा—पालक, बथुआ, बैंगन, अण्डा, मांस।

विटामिन—विटामिन कई प्रकार के होते हैं और ये सभी आवश्यक हैं।

विटामिन 'ए'—हरे रंग की पत्तेदार सब्जियां जैसे पालक, चौलाई, मेथी, कुल्फा, बथुआ, मूली के पत्ते, बैंगन आदि, पीले रंग के फलों जैसे पपीता, गाजर, आम, संतरा, अण्डा, देशी घी, वनस्पति तेल, मछली और मछली का तेल आदि।

विटामिन 'बी'—बिना पॉलिश का चावल, मूंगफली, गेहूं, बाजरा, मूंग की दाल, ज्वार, सोयाबीन, लोबिया, आम, चना, कलेजी, संतरा, पपीता, दही, मांस।

विटामिन 'सी'—गाजर, आम, नींबू, पपीता, टमाटर, आंवला, पालक, मेथी, पालक, पत्तागोभी, ग्वार, सेंजन की फली।

विटामिन 'डी'—जैतून का तेल, दूध, घी, मक्खन, कॉड लीवर ऑइल (कॉड-मछली के जिगर का तेल)।

विटामिन 'ई'—दूध, गेहूं आदि।

2. यह आवश्यक नहीं है कि गर्भवती माता को मंहगे सूखे मेवे जैसे—बादाम, काजू, किशमिश आदि खाने को मिलें। यदि आर्थिक अभाव के कारण उनका सेवन करना संभव न हो तो, उनके स्थान पर सस्ते मेवे जैसे—मूंगफली व पूर्व-उल्लिखित सब्जियों का सेवन किया जाना चाहिए।

3. गर्भवती को 2500 से 3000 कैलोरी भोजन की आवश्यकता होती है, जबकि एक सामान्य स्त्री को 1800 से 2400 कैलोरी भोजन की। अत: उसके भोजन की मात्रा अधिक व किस्म व अच्छी होनी चाहिए।

स्त्रियों के लिए आवश्यक दैनिक भोजन (ग्रामों में)

आवश्यक भोजन	स्वस्थ स्त्री	गर्भवती स्त्री	स्तनपान कराने वाली स्त्री
अनाज	400	300	300
दाल	50	60	80
रसेदार सब्जी	150	200	200
पत्तेदार सब्जी	150	200	200
घी	40	60	50
दूध	400	700	900
चीनी	50	60	60
फल	200	300	300
अंडा	—	1 अंडा	1 अंडा

गर्भवती स्त्री के लिए आवश्यक दैनिक संतुलित भोजन

प्रात:कालीन नाश्ता—एक गिलास दूध, दलिया, एक टोस्ट मक्खन, शहद व जैम लगा कर या एक सेब।

11 बजे —एक गिलास दूध, छाछ या सतरे का रस।

दोपहर का भोजन—2-3 रोटियां या दही चावल, घी सब्जी, पत्ते वाली सब्जी, सलाद।

मध्याह्न का नाश्ता—चाय, बिस्कुट, अंकुरित चने या कोई एक फल।
रात का खाना —2-3 रोटियां, कच्ची सब्जियों का सलाद, गाजर, आम, खीर या मिष्टान्न।
—सोते समय एक गिलास दूध व उबला हुआ। अंडा।

4. गर्भवती माता के भोजन में कब्ज पैदा करने वाली वस्तुएं नहीं होनी चाहिए जैसे अरवी, पूड़ी, कचौड़ी, परांठे, चाट-पकौड़ी, मलाई, हलुवा, मिठाइयां, खूब मिर्च-मसालों से भुना गरिष्ठ भोजन।

5. प्रायः यह देखा जाता है कि गर्भवती स्त्री खट्टी चीजें और मिट्टी खाने की इच्छा करती है। उसे नीबू आंवले, पोदीने, कैल्शियम की गोलियां आदि का प्रयोग करना चाहिए।

6. उसका भोजन हल्का, सुरुचिपूर्ण तथा पौष्टिक होना चाहिए। यह आवश्यक है कि वह प्रतिदिन कम-से-कम एक कटोरी हरी पत्तियों की सब्जी खाये। चोकर सहित आटे की रोटी खानी चाहिए। छाछ का प्रयोग उत्तम है।

7. भोजन में पोषण का अभाव हो, तो उसे डाक्टरी राय से आयरन की गोलियां, फोलिक एसिड के मिक्सचर, विटामिन युक्त गोलियां या मिक्सचर आदि लेने चाहिए।

नवजात शिशु का आहार

यूनिसेफ ने हाल के वर्षों में बहुत जोरदार ढंग से इस वैज्ञानिक ज्ञान का विश्वभर में प्रचार किया है कि मां का दूध ही बच्चे के लिए सर्वोत्तम आहार है। नवजात शिशु को भी माता का दूध शुरू से ही पिलाना चाहिए। कई भारतीय परिवारों में शुरू के एक-दो दिन बच्चे को माता का दूध नहीं पिलाया जाता। यह अनुचित है। ऐसे दूध को कोलोस्ट्रम कहते हैं। यह नवजात शिशु के लिए बहुत अधिक पौष्टिक होता है। इसमें बीमारियों से बचाने वाले तत्व बहुत अधिक होते हैं, जो माता के शरीर में बनते हैं। ये तत्व उस समय बीमारियों और संक्रमण से नवजात शिशु की रक्षा करते हैं, जब शिशु के जल्दी बीमार पड़ जाने की आशंका रहती है। बाद वाले दूध में भी ये तत्व होते हैं, पर कम मात्रा में। इसके अलावा कोलोस्ट्रम में ऐसे गुण भी हैं, जो

बच्चे को अस्थमा और एक्जीमा जैसी बीमारियों से बचाते हैं। ऊपरी दूध पाने वाले बच्चों में ये बीमारियां ज्यादा पाई जाती है। आज हम जान चुके हैं कि वस्तुत: कोलोस्ट्रम नवजात शिशु के लिए बहुत मूल्यवान है। कोलोस्ट्रम को फेंक कर हम शिशु के मुंह से सर्वोत्तम आहार छीन लेते हैं और इस तरह बीमारियों से बच्चे की रक्षा करने वाले तत्वों को छीन लेते है। कोलोस्ट्रम मे प्रोटीन, खनिज लवण और विटामिन बहुत अधिक मात्रा मे होते हैं। वास्तव मे कोलोस्ट्रम वह आहार है, जो नवजात शिशु को जन्म के बाद मिलना ही चाहिए।

यूनिसेफ के उक्त प्रकाशन मे बच्चे को माता का दूध पिलाने के बारे मे बहुत ही उपयोगी जानकारी प्रश्नोत्तर रूप मे दी गई हैं, जिसे संक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत किया जा रहा है :—

प्रश्न—मां बच्चे को दिन मे कितनी बार दूध पिलाए ?

उत्तर—शिशु प्राय: भूख लगने पर रोता है। बच्चा जब भी रोये, चाहे दिन हो या रात उसे दूध पिलायें। बच्चे की मांग पर दूध देना बेहतर है, बनिस्पत इसके कि आप उसका समय निश्चित करें। ...कुछ बच्चे कुछ दिनो मे समयानुसार दूध पीने के आदी हो जाते हैं और कुछ नही। इसलिए आप अपने बच्चो की तुलना दूसरे बच्चों से न करें। जब भी वह भूख से रोये, उसे अपना दूध दें। बच्चा जैसे-जैसे बडा होता है, वह हर बार कम दूध मागता है। ऐसा हर 2, 3 या 4 घटे बाद हो सकता है।

प्रश्न—बच्चे को कितनी देर दूध पिलाएं ?

उत्तर—आपका बच्चा कितनी देर दूध पीना चाहता है, यह उसी पर छोड़ दें। भूखा बच्चा दूध के लिये रोयेगा ही। हर स्तन पर बच्चे को दस मिनट दूध पिलाने का पुराना रिवाज या नियम इसीलिए बनाया गया था, क्योंकि औसतन बच्चा भरपेट दूध पीने मे इतना समय लगाता है। लेकिन सब बच्चे एक जैसे नही होते, इसलिए हो सकता है कि जहा कुछ बच्चे दस मिनट से कम समय लगाएंगे, वहां अन्य कुछ इससे ज्यादा।

प्रश्न—मां को कैसे पता लगेगा कि उसके बच्चे को पेट भर दूध मिल रहा है ?

उत्तर—यह सच है कि माताएं अपना दूध पिलाते समय नही जान सकतीं कि बच्चे ने कितना दूध पिया है। फिर भी यदि आपका बच्चा ठीक से सोता है, स्वस्थ है और जागने पर सक्रिय रूप से हंसता-खेलता है और उसका वजन ठीक-ठीक बढ़ रहा है, तो इससे स्पष्ट है कि आपके बच्चे को पोषण और वृद्धि के लिये पर्याप्त दूध मिल रहा है।

प्रश्न—मैं अपना दूध कैसे बढा सकती हूं ?

उत्तर—आप जितनी जल्दी बच्चे को स्तनपान करवाएंगी, आपके स्तनों में उतनी ही जल्दी और उतना ही अधिक दूध उतरेगा।

प्रश्न—दूध बढाने के लिये मुझे क्या खाना चाहिए ?

उत्तर—किसी विशेष भोजन की आवश्यकता नही हैं। माँ को भोजन में सामान्य से थोडा अधिक चावल, चपाती, दाल, हरी सब्जी व ताजे फल खाने चाहिए, जिससे वह स्वस्थ रहे और दूध की मात्रा बढ़ सके। अण्डे, मछली और मांस भी उसके लिए अच्छे है।

प्रश्न—काम करने वाली मां अपने बच्चे को दूध कैसे पिला सकती है ?

उत्तर—काम करने वाली ज्यादातर माताएं तीन महीने का मातृ अवकाश ले सकती है। बच्चे को अपना दूध पिलाने की इच्छा रखने वाली मां इस छुट्टी का ज्यादा-से-ज्यादा हिस्सा बच्चा होने के बाद उपयोग मे लें। इस दौरान आप बच्चे को बोतल की आदत डालने की भूल न करें।

अगर माँ अपने बच्चे को अपना दूध पिलाने के लिए दृढ संकल्प है, तो वह सुबह काम पर जाने से पहले अपने स्तन के निपल को हाथ से दबाकर दूध बाहर निकाल सकती हैं और दूध को उबालकर कीटाणुरहित किए बर्तन मे ढक कर रख सकती है। मां का दूध निकालकर कुछ घंटों के लिए फ्रिज में रखा जा सकता है और मां के बाहर जाने पर फिर से इस्तेमाल किया जा सकता है। इस दूध को सीधा आग पर गरम न करें। इसे गरम करने के लिए बर्तन को उबलते हुए पानी मे रखें। घर पर रहने वाला परिवार का सदस्य बच्चे को यह दूध एक साथ चम्मच से पिला सकता है।

मा का दूध जीवन के पहले 4-6 महीनों के लिए बेहतरीन और पूर्ण भोजन है। याद रखिए इसकी जगह दूसरी कोई और चीज नही ले सकती।

प्रश्न—मां का दूध पीने वाले बच्चे को क्या अतिरिक्त विटामिन और जूस देने चाहिए ?

उत्तर —4-6 महीनों तक अतिरिक्त विटामिन और जूस देने की कोई आवश्यकता नहीं है । मां के दूध मे वे सभी तत्व हैं, जिनकी बच्चे को इस अवस्था मे जरूरत होती है । हां, अगर मा कमजोर है, तो उसे विटामिन और जूस देने की जरूरत होगी । बच्चे के 4-6 महीनों का हो जाने के बाद उसके बढ़ते शरीर को अतिरिक्त आहार की जरूरत होती है । आप अपने बच्चे को ताजे सन्तरे, मौसम्बी या नीबू का रस, विटामिन और आयरन (लौहतत्व) की बूंदें भी दे सकती हैं ।

प्रश्न —क्या शिशुओं के लिए बाजार मे बिकने वाला डिब्बे का भोजन घर में तैयार किए गये भोजन से बेहतर है ?

उत्तर – बाजार में बच्चो के लिए खाने के जो डिब्बे मिलते हैं, उनमें पाउडर के दूध के साथ गेहूं और चावल जैसे पदार्थ कुछ मात्रा में मिले रहते हैं । अनाज और दूध से तैयार किए गए ये पदार्थ बहुत मंहगे होते हैं । दूसरी ओर एक अकलमंद मां अपने बढ़ते बच्चे को घर पर अपने खाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली चीजों से वह भोजन तैयार करके दे सकती है, जो उसके बच्चे के विकास के लिए जरूरी है ।

प्रश्न क्या बच्चे को बीमार होने पर भी अर्द्ध-ठोस खाना देते रहना चाहिए ?

उत्तर—बच्चे को वीमार पड़ने पर भी अर्द्धठोस आहार देना बन्द नही करना चाहिए । ठीक होने के लिए आपके बच्चे को वस्तुतः और अधिक भोजन की जरूरत होती है । पकी दाल और सब्जियो के साथ मिलाकर अगर आप बच्चे को खिचड़ी, दलिया, चावल या रोटी देती हैं, तो इससे आपके बच्चे को कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा ।

इस प्रकार हमने देखा कि शिशु के लिए मा का दूध ही सर्वोत्तम भोजन है । आजकल कई बड़ी-बड़ी अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक संस्थाओं जैसे 'नेसल' ने शिशु-आहारों को वेचने का जो जबरदस्त प्रचार सभी देशों (विशेषकर विकासशील देशों में) किया हुआ है, उससे बच्चों का कुपोषण होता है । उनकी मृत्यु-दर बढ़ रही है तथा निर्धन परिवारों के माता-पिता के परिश्रम की कमाई का अपव्यय हो रहा है । यूनिसेफ व अन्य कई संस्थाएं व वैज्ञानिक बोतल के दूध

और शिशु आहारों का घोर विरोध कर रहे हैं और जनता को चेतावनी दे रहे हैं कि ये बढ़ते हुए शिशु का जबरदस्त कुपोषण कर रहे हैं। अतः सभी माता-पिताओं को बाजारों में बिकने वाले सुन्दर स्वस्थ बालक के चित्र छपे शिशु-आहारों व ऊपरी पाउडर दूध की ओर आकर्षित नहीं होना चाहिए।

1984 में प्रकाशित यूनिसेफ के प्रतिवेदन 'दी स्टेट आफ दी वर्ल्ड्स चिल्ड्रन-1984' में बाजारू शिशु आहारों व बोतल द्वारा कृत्रिम ढंग से दूध पिलाने की गंभीर हानियों के निम्नांकित ठोस प्रमाण दिए गए हैं, जो हम सब की आंखें खोल देते हैं —

1. भारत और कनाडा में हुए अलग-अलग शोध-अध्ययनों ने बताया है कि कृत्रिम रूप से दूध पिलाये गये शिशु, मां के दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में, उनसे तीन गुना अधिक संख्या में डायरिया और श्वास संबंधी रोग से प्रभावित होते हैं।
2. चिली में यह पाया गया है कि कृत्रिम रूप से दूध पिलाये गये शिशु माता के दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में दुगनी से तिगुनी अधिक संख्या में अपने जीवन के प्रथम वर्ष में ही मर जाते हैं।
3. यमन अरब गणराज्य में बोतल से आहार पाने वाले शिशु मां का दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में आठ गुना अधिक कुपोषण का शिकार पाए गये हैं।
4. मध्य व दक्षिणी अमेरिका में शोध अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है कि जो शिशु छः मास से कम अवधि तक या बिल्कुल नहीं मां का दूध पीते रहे हैं वे छः मास से अधिक अवधि तक मां का दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में 5 से 10 गुना अधिक संख्या में मर सकते हैं।
5. न्यूयार्क राज्य, अमेरिका में हुए एक शोध अध्ययन से पता चला है कि बोतल का दूध पीने वाले शिशु मां का दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में तिगुने से भी अधिक बार अस्पताल में बीमारी के रूप में आये हैं।
6. फिलीपीन, पापुआ और न्यूगिनी में हुए अध्ययन यह बतलाते हैं कि माँ के स्तनपान का प्रचार बढ़ने से शिशुओं में डायरिया, छूत तथा मृत्यु संख्या की दरों में काफी कमी आई है।

7. विश्व के विभिन्न भागों में हुए स्तनपान व बोतलपान के 33 तुलनात्मक अध्ययनों का सर्वेक्षण-निष्कर्ष निकालते हुए लंदन स्कूल ऑफ हाइजीन और ट्रापिकल मेडिसन की डॉ० एन हिल ने बताया है कि जो शिशु मां का दूध और बोतल का दूध दोनों ही पीते हैं वे मां का ही दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में तीन गुना अधिक बचपन में मरते हैं, जो बच्चे केवल बोतल के दूध को पीते हैं वे पांच गुना अधिक संख्या में बचपन में मरते हैं।

पूर्व-प्राथमिक शाला के शिशुओं का पोषण

3 से 5 वर्ष की आयु का पूर्व-प्राथमिक शाला स्तर का बालक अर्थात् ऐसा बालक जो शाला नहीं जाता या नर्सरी शाला में जाता है, प्रायः परिवार में असावधानी या ध्यान न देने के फलस्वरूप कुपोषण का शिकार हो जाता है। उसके उपयुक्त पोषण के संबंध में डॉ० लक्ष्मी कृष्णामूर्ति (देख-रेख संस्था) ने निम्नांकित सरल और महत्वपूर्ण सन्देश दिये है, जिन्हें सामाजिक कार्यकर्ताओं, अध्यापकों, सभी प्रबुद्ध नागरिकों को जनसाधारण में अपनी-अपनी भाषा और शैली में बातचीत, कहानियों, उदाहरणों, संगीत या पद्य, मजाकों और सरल शिक्षण उपकरणों के द्वारा प्रसारित करना चाहिए :—

1. पूर्व-शालीय बालक को प्रौढ़ व्यक्ति के दैनिक भोजन के आधे भोजन के बराबर भोजन की प्रतिदिन आवश्यकता होती है।
2. ऐसे बालक को दिन में चार बार खाना खाना चाहिए।
3. किसी भी जिस राज्य में नर्सरी शालाओं में बालकों को शाला में भोजन प्रदान किया जाता है, बालकों को परिवार में मिलने वाले भोजन का उसे पूरक माना जाना चाहिए। उसके बदले का भोजन नहीं। इसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें परिवार में जो भोजन मिलता है, वह उनकी आवश्यकता से कम पोषक होता है, अतः उसके अतिरिक्त शाला में पोषणयुक्त आहार[5] भी उसे अवश्य मिलना चाहिए।

पूर्व-शालीय बालक के लिये दैनिक आहार की आवश्यकता अगले पृष्ठ पर देखें।

पूर्व-शालीय बालक के लिए आवश्यक दैनिक आहार

आहार	मात्रा (ग्रामों में)
1. अनाज	175
2. दालें	50
3. ताजे भोज्य पदार्थ	15
4 दूध और दूध से बने आहार	238
5. चिकनाई और तेल	23
6. पत्तेदार सब्जियां	63
7. अन्य सब्जियां	40
8. फल	50
9. चीनी और गुड़	37

3 से 5 वर्ष की आयु के बच्चों के लिये दैनिक आहार की आदर्श योजना इस प्रकार होनी चाहिए :—

3 से 5 वर्ष के बच्चों की दैनिक आहार योजना

समय	भोजन	मात्रा
1	2	3
8.00-9.00 प्रातः	पका हुआ अनाज	
	—दाल से बना भोजन	2-3 चम्मच
	या इडली	1-2 इडली
	या मक्खन के साथ ब्रेड	1-2 स्लाइस

1	2	3
	या पपड़ रागी (दूध के साथ)	थोड़ी मात्रा
	कम उबला या कुचला हुआ अण्डा	1 अण्डा
	या उबली हुई दालें	1 चम्मच
	उबला हुआ पशु-दूध	1/2 गिलास
10·30 प्रातः	फल का रस	1/2 गिलास (4 औंस)
	या ताजा मौसम्बी फल	1 फल
12-1 दोपहर	पका हुआ चावल	2-4 चम्मच
	या गेहूं या रागी की चपाती	1-2 चपातियां
	या उबला आलू, शकरकंद या टपिओका (कभी-कभी)	थोड़ा भाग
	दही या दूध	1/2 गिलास
	पकी हुई पत्तियों की या अन्य हरी सब्जी	1-2 चम्मच
	उपर्युक्त के स्थान पर कच्ची हरी सब्जियां सलाद के रूप में सप्ताह में तीन बार दें	1-2 चम्मच
3.00-4.00 तीसरे पहर	उबला हुआ पशु-दूध	1/2 गिलास
	मछली के जिगर का तेल	1 चाय का चम्मच
7.00-8.00 सायं	पके हुए अनाज जैसे सूजी, कुचले हुए गेहूं का दलिया या रागी का हलुआ या	2-3 चम्मच
	उबली दाल, मछली या मांस का भोजन	2 चम्मच
	उबला हुआ पशु-दूध (सोते समय)	1/2 गिलास

इंडियन कौंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च के अनुसार बड़े लड़के-लड़कियों का दैनिक संतुलित आहार इस प्रकार होना चाहिए :—

आहार	4-6 वर्ष		7-9 वर्ष		10-12 वर्ष		13-15 वर्ष			
							लड़के		लड़कियाँ	
	शाकाहारी	मांसाहारी	शा०	मा०	शा०	मां०	शा०	मा०	शा०	मां०
अनाज	200	200	250	250	320	320	430	430	350	350
दालें	60	50	70	60	70	60	70	50	70	50
हरी पत्तियों वाली सब्जी	75	75	75	75	100	100	100	100	150	150
जड़ें व कंद	50	50	50	50	75	75	75	75	75	75
फल	50	50	50	50	50	50	30	30	30	30
दूध	250	200	250	200	250	200	250	150	250	150
चिकनाई और तेल	25	25	30	30	35	35	35	40	35	40
मांस, मछली और अण्डे	—	30	—	30	—	30	—	60	—	60
चीनी और गुड़	40	40	50	50	50	50	30	30	30	30

भोजन की शक्ति को कैलोरी में नापा जाता है। एक ग्राम प्रोटीन में 4.1 कैलोरी शक्ति होती है। भारत में विभिन्न आयु के व्यक्तियों के लिए प्रतिदिन निम्नांकित कैलोरी प्रदान करने वाला भोजन ग्रहण करना आवश्यक है :—

		कैलोरी
शिशु	एक वर्ष की आयु तक	700
	0 से [illegible] माह तक	+120
	7 से 12 माह तक	+100
बालक	1 से 3 वर्ष	1200
	4 से 6 वर्ष	1500
	7 से 9 वर्ष	1800
	10 से 12 वर्ष	2100
किशोर लड़के	13 से 15 वर्ष	2500
लड़कियां	13 से 15 वर्ष	2200
लड़के	16 से 18 वर्ष	3000
लड़कियां	16 से 18 वर्ष	2200

विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों में कितनी कैलोरी-शक्ति होती है, इसका अनुमान निम्नांकित तालिका से लगाया जा सकता है :—

सामान्य खाद्य पदार्थों की कैलोरी शक्ति

खाद्य पदार्थ	प्रति 100 ग्राम की कैलोरी-शक्ति
गेहूं का बिना छाना हुआ आटा	341
चावल, बिना कुटा हुआ, मिल में कुटा हुआ	345
आलू	97
टपिओका	157
बन्दगोभी	27
ताजी मूंगफली	597
पका हुआ आम	51
केला	104
गाय का दूध	67

खाद्य पदार्थ	प्रति 100 ग्राम की कैलोरी शक्ति
भैंस का दूध	117
मक्खन	729
मुर्गी का अण्डा	173
बकरे का मांस (मांसपेशी)	194

सभी स्त्री पुरुषों और बालकों को पोषण की उचित शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। इसके लिए ग्राम सेविकाओं, अध्यापक-अध्यापिकाओं, समाज-कर्त्ताओं तथा जनप्रसार के साधनों के कार्यकर्त्ताओं को बहुत विचारशील और उत्साहपूर्ण ढंग से कार्य करना चाहिए। चित्रों, कविताओं, टेप किए हुए संगीत, फिल्म आदि का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए। पाठशालाओं में संतुलित आहार प्रदान किया जाना चाहिए। घरों में सब्जियां और फल उगाने को बहुत अधिक प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। गंदे, बासी सड़े-गले भोजन को ग्रहण करने के दोषों को बतलाया जाना चाहिए।

अध्याय-4

बालकों की बीमारियां और बचाव

अशिक्षा, अज्ञानता, निर्धनता, कुपोषण और हानिकारक स्वास्थ्य संबंधी परम्पराओं और रीतिरिवाजों के कारण भारत में बालको को कई प्रकार की बीमारियां हो जाती हैं और उनकी मृत्यु दर बहुत अधिक होती है। भारत सरकार के 1979 के बाल-मृत्यु सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि भारत का राष्ट्रीय मृत्यु दर औसत 122 बालक प्रति हजार है। उत्तर प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, मध्य-प्रदेश, उड़ीसा, आसाम, आंध्र प्रदेश और हिमाचल प्रदेश, में इस संख्या से भी अधिक बच्चे बचपन मे मर जाते हैं, जैसा कि निम्नांकित अंको से प्रगट होता है :—

राष्ट्रीय औसत बाल मृत्यु दर—122 प्रति हजार

उत्तर प्रदेश	178	गुजरात	146
राजस्थान	142	मध्य प्रदेश	138
उड़ीसा	127	आसाम	124
आंध्र प्रदेश	122	हिमाचल प्रदेश	127

यह पता चला है कि दो-तिहाई भारतीय बच्चे तो अपने जन्म के पहले माह मे ही (अधिकतर तो पहले सात दिनों में ही टिटेनस के कारण) मर जाते हैं। और गांवों मे 5 से 15 प्रतिशित बच्चे टिटेनस के कीटाणुओं के संक्रमण के ही कारण मर जाते हैं। जहां एक शिशु का जन्म के समय औसत भार 3 किलोग्राम होना चाहिए, वहां हमारे देश मे 40 प्रतिशित शिशु कम भार (1.5 से 2.5 किलोग्राम) के ही पैदा होते हैं। लगभग 25 प्रतिशत शिशु-मौतें डायरिया (दस्तों) के कारण होती हैं।

ग्रामीण भारत में एक वर्ष से कम आयु के शिशुओं तथा एक वर्ष से 4 वर्ष की आयु के शिशुओं की निम्नांकित विभिन्न कारणों से मृत्यु होती है :

शिशु और बच्चों की मृत्यु के मुख्य कारण
देहात 1977
एक वर्ष से कम आयु
के बच्चों का प्रतिशत (अगले पृष्ठ पर दर्शाया गया है)

1 से 4 वर्ष की आयु
के बच्चों का प्रतिशत (वही)

मुख्य कारण

1. दुर्घटना या चोट
2. बुखार
3. अस्तव्यस्त पाचन क्रिया
4. अस्तव्यस्त श्वसन प्रणाली
5. अन्य साफ रोग लक्षण
6. विलक्षण दीर्घता
7. अन्य लक्षण

ग्रामीण भारत में शिशु और बाल मृत्यु के प्रमुख कारण

कारण	1 वर्ष से कम आयु के शिशु (प्रतिशत में)	1 से 4 वर्ष की आयु के बालक (प्रतिशत में)
1. पेट की बीमारिया	2.6	33.2
2. बुखार	6	20.6
3. मल-निष्क्रमण संस्थान संबंधी बीमारियां (रेस्पीरेटरी डिसार्डर्स)	13.1	22.1
4. दुर्घटनाए	0.5	2.8
5. अन्य बीमारिया	8.1	168
6. शिशुपन की बीमारिया	69	4.5
7. अन्य कारण	07	4.5

न केवल भारत मे अपितु विश्व भर में (विशेषकर विकासशील देशों मे) बच्चों की बीमारियो और मृत्युदर से सम्बन्धित बहुत ही गंभीर तथ्य देखने में आते हैं। यूनिसेफ ने अपने विविध प्रकाशनो में निम्नांकित गभीर शोचनीय तथ्यो की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है :—

1. यूनिसेफ दक्षिण मध्य एशिया मण्डल के क्षेत्रीय निदेशक डेविड पी० हैवसटन के शब्दो मे :—

"अगर अगले तीन दिनो के दौरान कोई ऐसी विपत्ति आ पड़े, जिसमें 10 000 से ज्यादा बच्चे मर जाते है, तो इस बात में कोई सन्देह नही कि अतर्राष्ट्रीय समुदाय जी-जान से इसे दूर करने मे लग जायेगा। तथ्य तो यह है कि अगले तीन दिनो मे इतने ही बच्चे मरेंगे। इनकी मौत का कारण होगा— गरीबी, भूख और बीमारी। यह एक दुखद स्थिति है और हर साल 100 हिरोशिमा के बराबर संसार के विकासशील क्षेत्रो मे इसका दीर्घकालीन प्रभाव और ज्यादा गभीर है, क्योंकि वहा पैदा होने वाले करीब 30 प्रतिशत बच्चे पाच साल की उम्र पूरी करने से पहले ही कुपोषण और इससे संबंधित बीमारियो के शिकार हो कर मर जाते हैं।"

वे आगे कहते हैं, "अगर अगले तीन दिनों में दुनियां की सरकारें हथियार न खरीदें, तो बचे हुए पैसे से बच्चोंके लिए की जाने वाली यूनिसेफ की सभी वर्तमान गतिविधियां आने वाले 12 सालों तक चलाई जा सकेंगी। वास्तव में, हर महीने में एक दिन ही ऐसा कर लेने से दुनिया के सभी बच्चों को भोजन, पानी शिक्षा तथा स्वास्थ्य और रहने की सुविधाएं मिल सकेंगी।"

2. आज एशिया में 7000 छोटे बच्चे प्रति दिन, अर्थात् एक बच्चा प्रति 12 सेकण्ड में डायरिया से मर रहा है।
3. आज एशिया में 7000 से भी अधिक बच्चे प्रतिदिन छ: प्रमुख घातक बाल रोगों—टिटेनस, खसरा, पोलियो, तपेदिक, काली-खांसी हूपइंग्-कॉफ़ और डिप्थीरिया से मर रहे हैं।
4. प्रति 6 सैकिंड में एक बालक उन बीमारियों से मर जाता है या विक्षिप्त हो जाता है, जिनकी रोकथाम की जा सकती है।
5. पिछले शिशु-जन्म के एक वर्ष की अवधि के भीतर पैदा हुए बच्चे, दो या अधिक वर्ष बाद पैदा होने वाले बच्चों की तुलना में 2 से 4 गुना अधिक संख्या में मर जाते हैं।
6. विकासशील देशों में प्रति 20 बच्चों पर एक बच्चा पाच वर्ष की आयु पहुचने से पूर्व ही डायरिया से मर जाता है।
7. जो शिशु जन्म से छ: माह की अवधि से भी कम माता के दूध पर पाले जाते है, वे छ: माह या अधिक अवधि तक मां का दूध पीने वाले शिशुओं की तुलना में 5 से 10 गुना अधिक संख्या में मर जाते हैं।
8. जो शिशु जन्म के समय 2.5 किलोग्राम या उससे कम भार के होते हैं वे सामान्य भार (3 किलोग्राम) के शिशुओं की तुलना में तीन गुना अधिक संख्या में बचपन में ही मर जाते हैं। विकासशील देशों में चौथाई बच्चे कम भार के पैदा होते हैं।
9. विटामिन 'ए' और 'डी' की कमी बच्चों में अन्धेपन के 25% मामलों के लिए जिम्मेदार हैं।
10. डायरिया और डिहाइड्रेशन से विकासशील देशों में प्रति वर्ष 50 लाख मौत का ग्रास बन जाते है, जबकि खसरा, डिप्थीरिया,

पोलियो और टी०बी० से प्रति वर्ष 52 लाख बच्चे और मर जाते हैं।

11. यूनिसेफ की 1984 की रिपोर्ट के अनुसार 1980 में विश्व में 22 लाख बच्चे खसरा, 16 लाख बच्चे काली-खांसी (हूपइंग्-कॉफ़), 12 लाख बच्चे टिटेनस और नाल काटने से, 50 हजार बच्चे पोलियो, और 5000 बच्चे डिप्थीरिया से मरे थे; उनकी कुल संख्या 50,55,000 थी।

12. विश्व स्वास्थ्य संगठन की 1982 की रिपोर्ट के अनुसार विश्वभर के बच्चों में से केवल 10 से 20 प्रतिशत बच्चो को ही बीमारियो से बचाव करने के लिए टीके लगाये गये थे, दक्षिणी पूर्वी एशिया में तो उनका प्रतिशत और भी कम था। निम्नांकित प्रतिशत बच्चों को इन बीमारियों से बचाने के लिए टीका लगाया गया था :

टी० बी०	22%	डिप्थीरिया	17%
पोलियो	5%	खसरा	0.2%

इन तथ्यों से बाल स्वास्थ्य की गंभीर अवस्थाएं प्रकट होती हैं। अतः सभी सामाजिक कार्यकर्त्ताओं, शिक्षकों, माता-पिताओं व प्रबुद्ध नागरिकों का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि वे बालकों की बीमारियो और उनके बचावो के बारे में जनता को शिक्षित करें।

विभिन्न बीमारियों के संभावित चिह्न निम्नांकित होते है; जिन्हे देख उन्हें पहचाना जा सकता है :—

संक्रामक रोगों के संभावित चिह्न

चेहरे पर अधिक ललाई का होना, नाक, कान और मुंह की झिल्लियों का लाल हो जाना; उनमें जलन और दर्द होना; आंखो में जलन व पानी आना; नाक बहना; खांसी आना; बेहोशी, मितली या उल्टी आना; ठंड लग कर बुखार आना; सिरदर्द; भूख न लगना; थकान; चिड़चिडाहट; पेट में गड़-बड़ी; गर्दन अकडना; सांस लेने मे आवाज होना; होठ नीले पडना; खसरा

गले-सूजे जैसी बीमारियों के विशेष चिन्हों का चेहरे, गर्दन, पेट और हाथ आदि पर प्रकट हो जाना।

सामान्य जुकाम के सम्भावित चिन्ह

नाक अकड़ना, नाक और गले में रूखापन और खुजलाहट; खासी; छींकना, नाक बहना, आखो में पानी होना; बुखार; सिर दर्द; गले में खरखराहट।

नेत्र सम्बन्धी रोगों के सम्भावित चिन्ह

आखो का रगड़ना; लगातार गुस्सा करना; बार-बार आखें झपकना; पुस्तक बहुत पास या बहुत दूर रखकर पढना, रोशनी से आंखों को तकलीफ होना, ध्यान न देना; आंखो के चारों ओर लालाई होना व पानी निकलना; पलकें सूजी होना; चक्कर-सा आना, चीजों के ऊपर लुढकना; पढ़ते समय एक आंख बंद करना या ढकना, सिर दर्द की शिकायत; जल्दी थकना, रंगों में भेद करने में कठिनाई; श्यामपट पर लिखाई पढ़ने में कठिनाई होना और उसके बारे में बार-बार शिक्षक से पूछना; चिड़चिड़ा होना; चित्रों को समझाने में अस्पष्टता होना; हाथ व आख में कम समन्वय होना; चीजें दोहरी दिखाई देना, रोशनी की चमक से बचने के लिए सिर को अप्राकृतिक रूप से मोड़ना, तिरछी आख से देखना; आखो की पलकों में परतें पड़जाना; लगभग समान के संकेतों में अन्तर न कर पाना; आखो के घूमने में अजीबपन; शरीर में तनाव।

सुनने में संभावित कठिनाइयों के कुछ चिन्ह :

बोले हुए शब्दों को दोहराने को कहना; कान में दर्द की शिकायत, बहता हुआ कान सूजी हुई गाठें, सिर में घंटी बजने, गुंजन या हिस्-हिस् की आवाज सुनाई देने की शिकायत करना, मुंह से सास लेना, कान में भारीपन की शिकायत करना, बोलने वाले की तरफ कान मोड़ना, बार बार प्रश्नों के गलत उत्तर देना, बेचैनी, सवेंदनशील, वहमी, दूर रहना, आवाज के उद्गम को पहचान न पाना, काम शुरू करने में दूसरे बच्चों की पहल की प्रतीक्षा करना

या उनकी नकल करना, चेहरे पर आश्चर्यचकित होने की भाव-भंगिमा, पाठशाला की पढ़ाई में पिछड़ा होना, जल्दी थकना, सामूहिक क्रियाओं में अध्यापक के बहुत घनिष्ट या निकट होने की कोशिश करना, अस्पष्ट ढंग से बोलना, दूसरों के होठों को पढ़ने की कोशिश करना, जब अध्यापक कोई निर्देश दे रहा हो तो अन्य बच्चो की ओर ध्यान से देखना, दूसरे बालकों के वार्तालाप में बाधा डालना।

बोलने सम्बन्धी संभावित कठिनाइयों के कुछ चिह्न

1. **स्पष्ट रूप से बोलने में कठिनाइयां**—कोई आवाज या कोई शोर मान्य आवाज के बदले में बोला जाये ; शब्दो में से ध्वनि छूट जाये ; शब्दो के साथ ध्वनियां या शोर जुड़ जाये।
2. **आवाज सम्बंधी कठिनाइयां**—आवाज में नाक से बोलने की आवाज आये, भारीपन या रूखापन हो, आवाज ज्यादा ऊंची या बहुत कमजोर हो।
3. **भाषा सम्बन्धी कठिनाइयां**—बोली विकसित होने मे धीमापन, संकेतों के प्रति समुचित रूप से प्रतिक्रिया न कर पाना।
4. **लय की समस्याएं**—शब्दों को बहुत तेजी से बोलना, तुतलाना, ध्वनियो, शब्दो का दोहराना; मांसपेशियों के तनाव व भावनात्मक तनाव के साथ आवाज का अवरुद्ध हो जाना।

भावनात्मक और व्यवहार सम्बन्धी स्वास्थ्य समस्याओं के चिह्न

अनावश्यक बेचैनी जैसे नाखून काटना; होठ चूसना; बाल मरोड़ना या खींचना, कान खींचना, अकारण हाथों से खेलना, ख्यालों में डूबे रहना, लगातार ध्यान न देना, अत्यधिक संवेदनशील होना, शीघ्र रोना, बहुत डरपोक होना, अकेलापन पसन्द करना, बहुत अधिक लड़ने वाला, शिकायत करना कि उसके साथ भेदभाव या असमानता बरती जा रही है, विरोधी, पढ़ने या कविता पाठ में कठिनाई होना, उत्तम स्वास्थ्य के बावजूद भी शाला के कार्य के करने मे घटिया स्तर होना, लगातार अनुपस्थित रहना, लगातार

झूठ बोलना व धोखा देना, असहयोगात्मक व नकारात्मक रुख, प्राय: दूसरो पर धौंस जमाने की कोशिश करना, लगातार स्वार्थी होना, क्रोध की तनतनाहट, विध्वंसकारी, कठोर; अनियंत्रित भावनाएं; बहुत अधिक पढ़ने वाला, दूसरों पर रोब जमाने वाला, दबा हुआ व अप्रसन्न, बेचैन, दूसरो की सम्पत्ति का न आदर करने वाला, अड़ियल, चुराना।

कुपोषण की संभावित कमियों के कुछ चिह्न

वजन में लगातार वृद्धि न होना, भूख न लगना, सामान्य खेल क्रियाओं से बचने का प्रयास, गोल कंधे, जल्दी थकना, बैठने और खड़ा होने में दर्द की शिकायत, लगातार कब्जी रहना, सांस सम्बंधी छून, मुह के कोनो को फटना और कुछ ललाई रहना, बहुत पतलापन या बहुत मोटा होना, या सारे शरीर में असमान ढंग से वसा का वितरण होना, थका हुआ दीखना, बेचैन, चिड़चिड़ा, खराब दांत, पीला, लगातार भूखा रहना, रूखी खाल, सूखे, चमकविहीन व टूटने वाले बाल, सिर दर्द, आंखो मे थकान, रोशनी की ओर देखने में परेशानी, मसूड़ो का कोमल फूला हुआ, स्पंज जैसे गुदगुदा होना या उनमें से खून आना, खाल पर जल्दी रगड लग जाना, अधिक आंसू आना, कमजोरी और शक्ति का पतन, चटक कर टूटने वाले नाखून, खाल का जलना और उसमें चुभन का अनुभव होना; आंखों में जलन या चुभन होना।

दांतों के स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के कुछ चिह्न

सूजे हुए जबड़े, खराब दांत, होठ चूसना और नाखूनों को दांतो से काटना, दांतो में दर्द, दांतो में बहुत मैल होना, खून बहते हुए मसूड़े दांतो के किनारे पर भूरे-पीले या काले निशान असमान्य रूप से लगे हुए दांत, चबाने मे एक ओर मुह का प्रयोग, कठोर खाना खाने से मना करना, ढीले या हिलने वाले दांत।

भारतीय बालकों को होने वाले रोग

प्राय: भारतीय बालकों को कई प्रकार के रोग हो जाते हैं :

कुपोषण जन्य रोग—प्रोटीन की कमी से क्वाशर कोर रोग, सूखा रोग,

विटामिन 'ए' की कमी से रतौंधी, जिरोसिस और अंधापन, विटेमिन 'बी' की कमी से बेरी-बेरी रोग, विटामिन 'सी' की कमी से स्कर्वी-स्कर्वी रोग, विटामिन 'डी' की कमी से रिकेट्स (हड्डियों का टेढ़ामेढ़ा हो जाने का रोग), भोजन में आयोडीन तत्व की कमी से घेघा (गलगंड) रोग, लोहतत्व की कमी से खून की कमी (एनीमिया रोग)।

पेट के रोग—दस्तों का रोग (डायरिया), पेचिस, कब्ज, पेट में गैस होना या अफारा होना, उल्टी, पेट में कीड़े होना।

श्वास संबंधी रोग—जुकाम, खांसी, निमोनिया, ब्रोंकाइटिस, दमा, काली खांसी, डिप्थीरिया।

चेचक, खसरा, छोटी माता और गलसुए (मम्प्स)

गुर्दे के रोग

तपेदिक (टी०बी०)

छाती या फेफड़ों की टी० बी०, दिमाग की टी० बी०, पेट की टी० बी०, हड्डियों और जोड़ों की टी० बी०।

जिगर के रोग—पीलिया, जिगर-वृद्धि (सिरोसिस ऑफ लिवर)

त्वचा के रोग—फोड़े-फुंसी, एलर्जी, खाज (स्केबीज)

पोलियो—इन विभिन्न रोगों के लक्षणों व बचाव के उपायों को जानना चाहिए।

सामान्य रोगों के लक्षण व बचाव के उपाय

सामान्य रोगों के लक्षणों व बचाव के सुगमतम उपायों को निम्नांकित तालिका में प्रदर्शित किया जा रहा है, जो प्रायः बालकों को हो जाते हैं :—

क्र० सं०	रोग	रोग के लक्षण	फैलने के कारण	सम्प्राप्ति काल	बचाव के उपाय
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
1.	जुकाम	नाक का बहना; गला बैठना; सर्दी लग जाना; अंग अकड़ जाना; सामान्य बुखार की हरारत तथा सिर दर्द ।	तापक्रम के एका-एक परिवर्तन में शरीर को रहने देने से; व्यायाम व खेल के तुरन्त बाद में [illegible] पानी पीने से ।	जब तक इसका उपचार नहीं किया जाये ।	हल्का भोजन; खूब पानी पीना; पेट की सफाई की ओर ध्यान देना; कठिन कार्य न करना; भीड़ से बचना; ठंडी चीजों में गरम चीजें न खाना ।

2.	कुकर खांसी	गले में गांठें पड़ना; कंठ में खुजली या गिलगिली चले; खुल खुल कर खासना; खांसी आने पर चेहरा नीला पड़ना।	धूप, वायु व जल के द्वारा संक्रमण।	7 से 19 दिन तक	रोगी को 6 सप्ताह तक के लिए पृथक् रहने के लिये शाला से छुट्टी दे देना। रोगी को चिकनाई युक्त खाद्य पदार्थ न दें, उसे गर्म रखें व स्वच्छ वायु उपलब्ध होने दें।
3.	कण्ठ रोग (डिप्थीरिया)	तापक्रम का बढ़ना; गले की गाठों का फूल जाना; शरीर के कई भागों का सुन्न हो जाना, जोर की खांसी; नाक व गले में खुरंट जमना।	जल व जूठे भोजन द्वारा।	2 से 10 दिन तक।	बालकों को एक दूसरे के कलमों, पंसिलों को चूसने; एक ही बर्तन में पानी पीने; जूठा ग्रास आदि का प्रयोग करने को हतोत्साहित करना चाहिए। तथा बालकों को बीमारी फैलने के दिनों में गर्म पानी पिलाना चाहिए।
4.	गलसूए (मम्प्स)	लारग्रन्थियों का सूज जाना, मुंह खोलने में कठिनाई होना।	थूक, सांस व प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा।	4 से 14 दिन तक।	रोगी को पृथक् रहने देना; रोगी को अपने गले व कानों की रक्षा करने के लिये गुलबन्द बांधने को कहना चाहिए। स्वस्थ बालकों को रोगी के सम्पर्क से दूर रखना चाहिए।

5.	श्लेष्म ज्वर। (इन्फलुएंजा)	शरीर में दर्द, कंपकपी, तापक्रम बढ़ना, छींक व खांसी तथा बेचैनी व दस्त।	सांस, खांसी, छींक, नाक व मुह के मल द्वारा।	1 घंटे से 12 दिन	रोगी को पृथक् रखना, पूर्ण आराम करने देना चाहिए, भीड से बचाना, लाल दवा के पानी के घोल के कुल्ले करना।
6.	गर्दन तोड बुखार	जोर से सिर दर्द, बेचैनी, तापक्रम बढ़ना, गर्दन अकड़ जाना, बेहोशी होना, व बकवास करना।	भीड के कारण, थूक, छींक व वायु के द्वारा।	1 से 10 दिन तक	रोगी को भीड़ से पृथक् खुली वायु में रखना, थकना व कठिन कार्य न देना।
7.	खसरा	पहले चार दिन तक जोर की सर्दी लगना, फिर लाल रंग के मोटे-मोटे दाने, चेहरे व समस्त शरीर पर निकल आना, सिर दर्द व बेचैनी होना।	बीमार के सम्पर्क व वायु तथा गले व स्वांस मार्ग से निकलने वाले पानी से।	12 से 14 दिन तक	रोगी बालक को अन्य बालकों से पृथक् करना, तथा उसे ठंडी हवा के झोकों से बचाना व गर्म कपड़ों से ढकना चाहिए।

8.	चेचक	ज्वर, सिर दर्द, कमर व अंगों में दर्द; चेहरे, सिर के पीछे और समस्त शरीर पर दाने निकलना।	रोग स्वयं उसके वस्त्रों, त्वचा की सूखी पपड़ी के द्वारा।	10 से 14 दिन तक।	चेचक का टीका लगवाना, रोगी को अन्य व्यक्तियों से पृथक् रखना, कपड़ों को नि.संक्र-मित करना, व उसके मलमूत्र, खुरंट आदि को जलाना।
9.	क्षय रोग	हल्का ज्वर, भार में कमी, कमजोरी, खांसी, पसीना, आंखें चमकना।	रोगी के सम्पर्क से	अनिश्चित	रोगी को स्वस्थ व्यक्तियों से दूर सेनोटोरियम में रखना, रोगी को पौष्टिक भोजन, शुद्ध वायु, धूप का सेवन करने देना, चिन्ताओं व कठिन परिश्रम से मुक्त रहना, तपेदिक से बीमार गायों का दूध न पीना, बीमार के थूक व मल-मूत्र को अलग जला देना।

1	2	3	4	5	6
10.	हैजा	उल्टी पर उल्टी होना, साथ मे दस्त आना, दस्तों का रंग चावल के मांड-सा होना, हाथ ठण्डे पड़ना तथा पेट में दर्द होना, तथा जोर की प्यास लगना।	मक्खियो व हैजे के कीटाणु द्वारा फैलना।	1 से 5 दिन तक।	सड़े-गले फलों; बासी भोजन, गंदे पानी उपयोग न करने देना, रोग फैलने के दिनों में गर्म उबले हुए पानी का सेवन करना चाहिए। रोगी के कपड़ों को निःसंक्रामित करना तथा उसके मल-मूत्र को जला देना।
11.	मोतीझरा ज्वर	ज्वर, सिर दर्द, कब्ज व दाने शरीर पर झिल मिलाना।	रोगी के मल-मूत्र, थूक व जल की गन्दगी से।	17 से 14 दिन तक	मोतीझरा का टीका लगवाना, स्वच्छ जल व भोजन का सेवन, रोगी के मल-मूत्र को जलाना, वस्त्रों का संक्रामण।
12.	पेचिस	पेट में दर्द, आंव व रक्त के साथ दस्त आना।	गन्दे जल व रोगी के मल के कीटाणुओं को मक्खियों द्वारा फैलाना।	3 दिन तक का।	हैजे व मोतीझरा जैसे ही सावधानियां बरतनी चाहिए।

13	मलेरिया	शरीर में पीड़ा; ठण्ड लगना, कंपकपी होना, सिर दर्द, तापक्रम बढ़ना।	मलेरिया के मच्छर के काटने से।	6 से 12 दिन तक।	वर्षा के जल व गन्दगी से भरे गड्ढों को पाटना, उनमें व्याप्त मच्छरों को मिट्टी का तेल छिड़क कर नष्ट करना, मसहरी लगाकर सोना, मच्छरों का तेल लगाकर सोना।
14.	खुजली	चर्म पर खुजलाहट आना।	खुजली के कीड़े द्वारा।		रोगी को स्वस्थ व्यक्तियों से पृथक् करना, उस रोगी की त्वचा को गर्म पानी से धोने की व्यवस्था करना, वस्त्रों का निःसंक्रामक करना।
15.	दाद	चर्म पर गोल दरदरा चकता बनना, खाल पर चिलन-सी आना, चिरमिराहट होना।	दाद के फंगस द्वारा।		उनके कंघे, ब्रुश, तौलिये, रूमाल आदि को प्रयोग में न लाना व खुजली के लिए बरती जाने वाली सावधानियां बरतना।

1	2	3	4	5	6
16.	फोड़े-फुंसी	चर्म पर फोड़े-फुंसी निकल आना, पकाव, चमड़ी में दर्द व तनाव, फूटने पर पीप निकलना।	रक्त की अशुद्धि के कारण व रोगी की पीप के लगने से।		रोगी को स्वस्थ व्यक्तियों से दूर रखना, उचित मलहम पट्टी करना, मीठी-खट्टी चीजों का प्रयोग न करना तथा गर्म पानी व साबुन से धोना।
17.	आँखें दुखना	आंख लाल होना, कीड़ खूब निकलना और आखों में बहुत दर्द होना।	मक्खियों का आंखों पर बैठना व उनके द्वारा गन्दगी छोड़ना, रोगी [redacted] सम्पर्क।		आंखों को बोरिक ऐसिड के गर्म पानी के घोल से सेंकना, कपड़े से उन्हें न पोंछना, उचित दवा डलवाना।
18.	पीलिया	आँखें नख, मुख, मूत्र हल्दी के समान पीले पड़ना और भोजन से अरुचि होना।	वात, पित्त-कफ के कुपित होकर रक्त के बिगड़ जाने से।		पानी को गर्म करके पीना, हरी शाक सब्जियां खाना, पालक व टमाटर का प्रयोग करना, लोहे युक्त औषधि का प्रयोग, हल्का व पौष्टिक भोजन ग्रहण करना।

19.	कान बहना व दर्द	कान में दर्द होना या उसमें से पीप निकलना ।	कान में से मैल न निकालने के कारण ।		कान मे गुनगुना सरसों का तेल डाल कर उसमें से मैल निकालना । कान में सीक व पैने औजार से मैल निकालने के प्रयत्न न करना ।
20	दांतों मे दर्द होना	दांतों में दर्द होना, हिलना ।	दांतों को नियमित रूप से अच्छी तरह साफ न करने से ।		नियमित व ठीक प्रकार से दांतुन करना व दांतों के अधिक गर्म व अधिक ठंडी चीजें सम्पर्क में नही आने देना ।

पोलियो क्या है ?

पोलियो सूक्ष्म जीवाणुओं से होने वाली छूत की बीमारी है, जो प्रायः तीन महीने से पांच साल की उम्र के बच्चों में पाई जाती है। ये जीवाणु मुंह या नाक द्वारा शरीर में प्रवेश करते हैं और आंत में जाकर अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं। यहां से धमनियों के द्वारा जाकर मेरुरज्जु एवं स्नायुओं को नुकसान पहुंचाते हैं। यह बीमारी बच्चे को अपंग तक कर देती है।

पोलियो बच्चे को विकलांग कर सकता है

यह बीमारी कैसे फैलती है ?

आमतौर पर यह बीमारी थूक व मल द्वारा फैलती है। इसके द्वारा खाने-पीने की सामग्री दूषित हो जाता है। अक्सर पोलियो के ज्यादा मरीज गर्मी एवं वर्षा ऋतु और उसके तत्काल पश्चात् पाए जाते हैं।

रोग के लक्षण

जब तक किसी अंग को लकवा न मार जाए, इस रोग की पहचान मुश्किल होती है। किन्तु रोग की आरम्भ की अवस्था में प्रायः हल्का या तेज बुखार-सा होता है। रोगी को सिर-दर्द, जुकाम, उल्टी, सुस्ती, पेट में गड़बड़ी, गर्दन, कमर या अन्य अंगों में दर्द या जकड़न, और उसके शरीर पर खसरे जैसे दिदोरे हो सकते हैं।

रोग के बढ़ जाने पर बच्चे को कब्ज, बेचैनी, कमजोरी के अलावा उसकी मांसपेशियों में लकवा हो सकता है, जिससे वह कुछ अंगों को हिला-डुला नहीं सकता। कभी-कभी इस रोग के कारण निगलने या सांस लेने में कठिनाई हो सकती है।

पोलियो के रोगी का इलाज व देख-रेख

1. अगर बच्चे को पोलियो हो गया है तो घबराएं नहीं। किसी डॉक्टर को दिखाएं और उसके कहे अनुसार इलाज करें।

2. रोग के तीक्ष्ण प्रकोप के समय रोगी को पहले छः सप्ताह आराम की जरूरत होती है। बच्चे को खड़ा करने या बैठाने की कोशिश न करें।

बच्चे को ठीक स्थिति मे रखें, ताकि उसके जोड़ न अकड़े। बच्चे के अंगों को सहारा देने के लिए छोटे तकिए या रेत की थैली इस्तेमाल करें।

3. एक खुले बर्तन मे हल्का गरम पानी लें और बच्चे को उसमे आराम से लिटा दें। धीरे-धीरे बच्चे के सारे जोड़ हिलाएं, विशेषकर उस अग के जोड़, जिसमे दर्द या हरकत नही हो।

अगर बर्तन नही हो तो तौलिए को हल्के गरम पानी मे भिगोकर उससे अंगों की सिकाई करें।

4. यदि आपके बच्चे को प्लास्टर के स्पलीट मिले हो तो उसे रात को बाधे। दिन मे जब बच्चा सो रहा हो तो भी दो-तीन घण्टे के लिए उसे स्पलीट बांधें।

5. बच्चे को खासी, जुकाम या छूत की अन्य बीमारी से बचाकर रखें। उसे संतुलित भोजन दें।

6. यदि दवाई की आवश्यकता होगी तो डॉक्टर स्वय सलाह देंगे। इस समय कोई इंजेक्शन नही लगाना चाहिए।

7. सब जोड़ दिन में दो या तीन बार अवश्य हिलाएं। जोड़ो को पूरी हद तक खोलें या बंद करें। इससे जोड खराब होने से बचेंगे।

8. हर दो या तीन घटे बाद बच्चे की करवट बदल दें और कुछ देर उसे उल्टा लिटाएं, जिससे वह निमोनिया से बचा रहे।

9. जिस बच्चे को पोलियो का रोग हो जाए, और उसका असर किसी अंग पर पड़ जाए तो उसे अधिक खराबी से बचाने के लिए विशेषज्ञ से समय-समय पर जाच करवाते रहें।

10. शुरु के छः सप्ताह मे ऊपर बताए तरीके से देखभाल करें। उसके बाद से लेकर अगले दो साल तकका समय महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस समय अगर सही इलाज किया जाए तो बच्चे की मांसपेशियां काफी हद तक ठीक हो सकती हैं।

ज्यादातर बच्चे पोलियो की बीमारी के बाद ठीक इलाज और देखरेख होने पर अपना पूरा ध्यान रख सकते हैं और स्वतंत्र जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

बच्चे को दवा पिलाने के एक घंटा पहले या बाद में कुछ खाना-पिलाना नही चाहिए। मा का दूध भी दवा पिलाने के बाद घंटा पहले या बाद तक नहीं देना चाहिए।

बच्चे को पोलियो की दवा देकर उसे पोलियो से बचाएं

बच्चों को पोलियो की दवा पिलाना, पोलियो से बचाने का एकमात्र कारगर उपाय है। अत. अपने सभी बच्चों को यह दवा पिलाकर, उनमे बचाव की शक्ति पैदा करें। जब बच्चा दो महीने का हो जाए उसे इसकी पहली खुराक दें। उसके बाद इस दवा की दो और खुराकें एक से दो महीने के अंतर पर जरूर दे देनी चाहिए। पहली तीन खुराकों के बाद चौथी बूस्टर खुराक डेढ़ से दो साल की उम्र के बीच दे देनी चाहिए।

अगर किसी वजह से ऐसा मुमकिन न हो पाए तो एक साल की उम्र के अन्दर ये तीनों खुराकें एक से दो महीने के अन्तर पर जरूर दे दी जानी चाहिए।

ध्यान रखें पहली तीन खुराकों में से तीसरी खुराक और चौथी बूस्टर खुराक के बीच 12 से 15 महीने का अंतर होना चाहिए।

अच्छा यही होगा कि यह दवा सर्दी के मौसम में दी जाये, क्योंकि गर्मी के मौसम मे दस्तों के कारण इस दवा का असर कम हो सकता है।

बच्चा जब दो महीने का हो जाए, उसे पोलियो की दवा देना शुरू कर दें।

निम्न अवस्था में बच्चों को यह दवा नहीं पिलानी चाहिए :

1. अगर बच्चे को कोई भी छूत की बीमारी हो या
2. तेज बुखार हो या
3. उल्टी व दस्त लगे हों या
4. खून का कैंसर हो।

पोलियो की दवा कहां मिलती है ?

यह दवा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र या किसी भी बड़े अस्पताल के स्वस्थ-

शिशु केन्द्र में पिलवाई जाती है। अगर जगह के बारे में मालूम नहीं हो तो किसी डॉक्टर से पूछें।

बचाव के लिए सावधानी :

पोलियो की दवा बच्चे को देना जरूरी है। इसके साथ निम्नलिखित सावधानी भी जरूरी है :

1. खाने-पीने की सामग्री को धूल एवं मक्खियों से बचाएं। सब्जी व फल को खाने से पहले धोएं। कटे हुए फल व सब्जी तथा अन्य खाद्य सामग्री, जिन पर धूल एवं मक्खियां बैठी हों, बच्चों को न खाने दें।

2. बच्चों को गंदे पानी में न खेलने दें।

3. साफ और सुरक्षित पानी पीएं।

4. बच्चों के नाखून समय-समय पर काटते रहें। उन्हें खाना खाने से पहले व शौच के बाद हाथ धोना सिखाएं।

जब आपके शहर या गांव में बहुत से बच्चों को पोलियो हो रहा हो तब निम्नलिखित सावधानी बरतें :

1. बच्चे के टॉंसिल का ऑपरेशन न करवाएं। अपने डॉक्टर से सलाह लें।

2. स्वच्छ शौचालय का इस्तेमाल करें व मल-मूत्र को उचित जगह फेंकें

3. बच्चे को ठंड, भीड़ और थकावट से बचाएं।

4. बच्चे को बीमार बच्चों से दूर रखें।

आंख दुखना या आंखें आना

(कंजक्टीवाइटिस)

आंख दुखना या आंखें आना आंखों का एक छूत का रोग है। यह एक प्रकार के बैक्टीरिया, फफूंद या वायरस (विषाणु) के कारण होता है। इस

आंख का सफेद भाग (दृष्टिपटल) और पलकों की भीतरी सतह को ढंकने वाली पतली पारदर्शी झिल्ली लाल हो जाती है।

यह रोग प्रायः खतरनाक नहीं होता, किन्तु ठीक प्रकार से इलाज करवाने में देरी करने से नेत्र-ज्योति पर असर हो सकता है।

आंख दुखने का रोग अचानक हो जाता है। आंखें लाल हो जाती हैं। 4-6 घण्टे के भीतर रोग बहुत बढ़ भी सकता है। यह रोग किसी को भी हो सकता है, किन्तु 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को इसकी छूत अधिक लगती है।

लक्षण

यह रोग एक आंख या दोनों आंखों में खुजलाहट के साथ शुरू होता है। आंख लाल हो जाती हैं और पलकें सूज जाती हैं। शुरू में आंखों से पानी या पतली कीच-सी निकलती है। इसके बाद आंखों में गाढ़ी-सी सफेद या पीलापन लिए सफेद कीच-सी इकट्ठी हो जाती है। आंख खोलना मुश्किल हो जाता है और रोगी प्रकाश सहन नहीं कर सकता। यदि इलाज न करवाया जाये तो आंख की पुतली में फोड़ा हो जाता है और आंख की पुतली पर सफेदा, माड़ा या फूला बन जाता है और सदा के लिए नेत्र-ज्योति नष्ट हो सकती है।

रोग कैसे फैलता है ?

यह रोग दूषित हाथ या अगुलियां आंखों पर लगाने से, दूषित तौलिया, रूमाल आदि से आंखें पोंछने से और रोगी की अन्य दूषित चीजों के प्रयोग से भी फैलता है। मक्खियां भी इस रोग को रोगी से दूसरों तक पहुंचा देती हैं। यह रोग धूल, धुआं, गंदे पानी में नहाने या रोगी की सुरमा डालने की सलाई का इस्तेमाल करने से या एक ही अंगुली द्वारा एक से अधिक बच्चों के काजल लगाने से भी हो जाता है।

इस रोग का इलाज यदि ठीक प्रकार से करवाया जाए, तो 4 से 7 दिन में रोग ठीक हो सकता है। इसके लिए रोगी को अस्पताल में रहने की आवश्यकता नहीं होती।

नवजात शिशु के नाभि-तन्तु [नाल] को स्वच्छता से ही काटना उचित

रोग-प्रतिरक्षण के लिए शिशु को टीका लगवाना अनिवार्य

काम-काजी महिलाओं के बच्चों के लिए बालवाड़ी की सुविधा

गुरुकुल में बच्चों के सामूहिक भोज का एक दृश्य



शिशु को पौष्टिक आहार की आदत डालते हुए एक अभिभावक

स्वास्थ्य के लिए व्यायाम जरूरी—लड़कियाँ ड्रिल करते हुए

स्कूल में बच्चों को योगाभ्यास कराते हुए एक शिक्षक

कृत्रिम अवयवों के द्वारा विकलांग बच्चों को राहत

किंडरगार्टन स्कूल में बच्चों को प्रशिक्षण

हस्तशिल्प कला के प्रति बच्चों में व्यावहारिक रुचि जगाना आवश्यक

बच्चों की ज्ञानवृद्धि के लिए लाइब्रेरी

रचनात्मक प्रतिभा का बच्चों में प्रोत्साहन

मनोरंजन हेतु कैरम खेलते हुए बच्चे

पालतू पक्षियों के बीच हर्षित बच्चे

कपड़े धोने का अभ्यास करते हुए बच्चे

मनोरंजन भी और ललित कला का प्रशिक्षण भी

रोग की रोकथाम

इस रोग की रोकथाम का सबसे उत्तम उपाय साफ रहना, सफाई के प्रति सावधानी बरतना और पास-पड़ोस को साफ-सुथरा रखना है। रोगी के प्रतिदिन काम में आने वाले तौलिए, रूमाल और वस्त्रों को, जब तक अच्छी तरह साफ न कर ले, दूसरों कपड़ों के साथ न मिलाएं। भीड़-भाड़ से बचकर रहें। नीचे लिखी बातों का ध्यान रखें :—

—रोगी के रूमाल, तौलिए और अन्य वस्त्रों को उसके दुबारा प्रयोग करने के पूर्व धो लें। अच्छा तो यह होगा कि उन्हें गर्म पानी में साफ करें।

—यदि किसी बच्चे को यह रोग हो जाय तो उसके ठीक होने तक उसे स्कूल न जाने दें।

—अत्यधिक प्रकाश से आखों को बचाने के लिए धूप का चश्मा पहनें अथवा छाते का प्रयोग करें या सिर पर इस प्रकार कोई साफ कपड़ा रख लें, जिससे आंखों पर धूप की चमक न पड़े। रोगी का चश्मा किसी और को न पहनने दें।

—जहां आंख दुखने की बीमारी काफी मात्रा में फैली हो, वहां तालाब या स्विमिंग पूल (तरण ताल) में नहाने से परहेज करें।

—आंखों को प्रतिदिन साफ पानी से 3-4 बार धोएं।

—3-4 दिन तक घर में रहकर आराम करें। तुरन्त डॉक्टर की राय लें। ऐसा करने से एक तो रोग जल्दी ठीक हो जायेगा और दूसरे इससे अन्य लोगों मे रोग फैलने का भय कम हो जायेगा।

—घर मे सभी के लिए एक ही सुरमा-सलाई का उपयोग न करें।

—आंखों में काजल न डालें।

याद रखिए

—आंख दुखनी आना एक छूत का रोग है।

—रोग वैसे तो खतरनाक नहीं है, किन्तु इलाज में देर करने से खतरनाक हो सकता है।

—आंखों मे खुजलाहट, आंखों में पानी आना, पलकों में सूजन, आंखों में लाली, आंखों से कीच आना इस रोग के लक्षण हैं।

—यह रोग दूषित अंगुलियों द्वारा आंखों को छूने से और रोगी के कपड़े, तौलिए, रूमाल आदि के उपयोग करने से फैलता है।

—रोग का ठीक ढंग से इलाज करवाने से यह रोग 4-7 दिन मे ठीक हो जाता है।

—साफ रहने और सफाई के प्रति सावधानी बरतने से रोग की रोकथाम में मदद मिलती है। अपने पास-पड़ोस को साफ-सुथरा रखें। मक्खियो से बचे रहें।

डायरिया का नया इलाज : मुख द्वारा पुनर्जलीकरण

हैजा, जठर-आन्त्रशोथ तथा अन्य अतिसारीय रोग होने पर शरीर में तरल पदार्थों और नमक की बहुत कमी हो जाती है। इस अवस्था को 'निर्जली-करण' कहते हैं। यदि शीघ्र उपचार न किया जाए तो इससे प्रायः मृत्यु भी हो जाती है।

निर्जलीकरण की अवस्था को आसानी से पहचाना जा सकता है। इसके लक्षण इस प्रकार है :—,

—रोगी को बहुत प्यास लगती है, उसकी आंखें अंदर धंस जाती हैं तथा अंगुलियो का अग्र भाग ठंडा हो जाता है। नब्ज व सांस की गति भी तेज हो जाती है।

—शिशुओं के सिर मे कोमल भाग (तालु) का नीचे बैठ जाना निर्जली-करण की अत्यधिक तीव्रता का लक्षण है।

निर्जलीकरण के मामले में यह आवश्यक है कि शरीर से निकले तरल पदार्थ व नमक की यथा-शीघ्र पुन.पूर्ति कर दी जाए। शरीर से निकले तरल पदार्थ की पूर्ति की प्रक्रिया को 'पुनर्जलीकरण' कहा जाता है। पुनर्जलीकरण का यह कार्य रोगी को यथा-शीघ्र घोल देकर किया जा सकता है।

सभी अतिसारीय रोगों के उपचार में 'मुख-ग्राही ग्लूकोज इलैक्ट्रोलाइट घोल चिकित्सा' का विकास पुनर्जलीकरण के लिए एक बड़ी उपलब्धि है। यह घोल निम्न पदार्थों की निर्दिष्ट मात्रानुसार तैयार किया जा सकता है :—

सोडियम क्लोराइड	3·5 ग्राम
सोडियम बाइकार्बोनेट	2·5 ग्राम
पोटाशियम क्लोराइड	1·5 ग्राम
ग्लूकोज	20·0 ग्राम
पीने का पानी	1 लीटर

इस घोल को गर्म करना या उबालना नहीं चाहिए।

शिशुओं तथा छोटे बच्चों को दो-तीन चाय के चम्मच के बराबर इस घोल की मात्रा मुंह के द्वारा प्रति 5-10 मिनट के बाद देनी चाहिए। बड़े बच्चों व वयस्कों को इस घोल की मात्रा उनकी इच्छानुकूल देनी चाहिए। शिशुओं को स्तनपान, दलिया आदि उनकी सामान्य खुराक बराबर देते रहें। दस्त रुकने की प्रतीक्षा किए बिना, उन्हें उनकी सामान्य खुराक देते रहना चाहिए। बच्चे को कभी भूखा न रहने दें।

एक बार तैयार किया हुआ पुनर्जलीकरण घोल 12 घंटे के बाद प्रयोग नहीं करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर ताजा घोल तैयार करना चाहिए तथा इसे अगले 12 घंटों में प्रयोग के लिए रख सकते हैं।

यदि रोगी के पेशाब में रुकावट, जोड़ों और पुट्ठों में ऐंठन तथा बेहोशी की हालत हो तो शीघ्र ही उसे निकट के स्वास्थ्य केन्द्र या चिकित्सक के पास उचित सलाह व चिकित्सा के लिए भेज देना चाहिए।

याद रखिए

हैजा तथा अन्य अतिसारीय रोगों में रोगी के शरीर से काफी मात्रा में तरल पदार्थ व नमक निकल जाते हैं। यह स्थिति उसके जीवन के लिए घातक हो सकती है। रोगी को उसके सामान्य आहार के साथ पुनर्जलीकरण घोल देकर इस स्थिति की रोकथाम की जा सकती है।

पंजीकृत औषध विक्रेताओं तथा अधिकृत औषध भण्डारों से खरीदी हुई वस्तुओं से ही पुनर्जलीकरण घोल तैयार करना चाहिए।

ये वस्तुएं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में भी प्राप्त की जा सकती हैं।

बच्चों का रोगों से बचाव

भारत सरकार के केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो व स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय द्वारा प्रसारित पम्फलेट 'अपने बच्चों को रोगों से बचाइए' में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण व उपयोगी निम्नांकित सारिणी दी गई है, जिसके अनुसार बच्चों को विभिन्न छूत के रोगों से बचाने के लिए दवा दी जानी चाहिए या टीके लगाये जाने चाहिए।

प्रसव-पूर्व

—गर्भवती मां को टिटेनस टॉक्साइड का टीका लगाएं।

बच्चे : आयु 3 से 9 माह

(क) इससे शुरू करें—

—डी० पी० टी० का पहला टीका।

—पोलियो वैक्सीन (मुंह से दी जाने वाली) की पहली खुराक।

—बी० सी० जी० का टीका।

(ख) एक से दो महीने के बाद—

—डी० पी० टी० का दूसरा टीका।

—पोलियो वैक्सीन की दूसरी खुराक।

—चेचक का टीका।

(ग) फिर से दो महीने के बाद—

—डी० पी० टी० टीका तथा पोलियो वैक्सीन (मुंह से दी जाने वाली) दें।

9 से 11 माह

—मीज़ल्स वैक्सीन (खसरे के लिए) का एक टीका, यदि उपलब्ध हो।

18 से 24 माह

—डी० पी० टी० का संवर्धक (बूस्टर) टीका।

—पोलियो वैक्सीन की संवर्धक खुराक।

5 से 6 वर्ष

(क)—डी० टी० (डिप्थीरिया एवं टिटेनस) का संवर्धक (बूस्टर) टीका।

—स्कूल में प्रवेश के समय टाइफायड संयोजक (मोनोवैलेण्ट) या द्विसंयोजक (बाइवैलेण्ट) वैक्सीन का पहला टीका।

(ख)—एक से दो माह के अन्तर से टाइफायड वैक्सीन का दूसरा टीका।

10 वर्ष

—टी० टी० (टिटेनस टॉक्साइड) का संवर्धक टीका।

—टाइफायड संयोजक या द्विसंयोजक वैक्सीन का संवर्धक टीका;

या

—टाइफायड (संयोजक या द्विसंयोजक) वैक्सीन का पहला टीका, यदि पहले नहीं दिया गया हो। इसके पश्चात् एक से दो माह के अन्तर से टाइफायड वैक्सीन का दूसरा टीका।

16 वर्ष

—टी० टी० (टिटेनस टॉक्साइड) का संवर्धक टीका

—टाइफायड संयोजक या द्विसंयोजक वैक्सीन का संवर्धक टीका

—टाइफायड (संयोजक अथवा द्विसंयोजक) वैक्सीन का पहला टीका।

—यदि पहले नहीं दिया गया हो तो एक से दो माह के अन्तर से टाइफाइड का दूसरा टीका।

नोट :

1. गर्भवती मां

चूंकि आमतौर पर धनुषवाय या धनुषटंकार के विरुद्ध प्रतिरक्षण का पिछला इतिहास उपलब्ध नहीं होता, यह बेहतर है कि गर्भावस्था में यथा-सम्भव जल्दी-से-जल्दी टिटेनस टॉक्साइड के तीन टीके एक-एक महीने के अन्तर से दिये जाए। चेष्टा यही की जानी चाहिए। तथापि हर गर्भवती मां को टिटेनस टॉक्साइड के तीनों टीके लगाए जाने चाहिए, चाहे उसकी जांच देर मे ही क्यों न की गई हो। इससे मां और नव-जात शिशु दोनों को धनुष-वाय व धनुषटंकार से सुरक्षा मिलती है।

2. बच्चे

(क) विभिन्न रोगों के विरुद्ध प्रतिरक्षण हेतु ऊपर दर्शायी गयी आयु टीके व दवा लेने के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। फिर भी यदि पहली खुराक शुरू करने मे देर हो जाए तो उसी के अनुसार अगली खुराक देने का समय नियत किया जाना चाहिए। चेष्टा यह की जानी चाहिए कि एक वर्ष का होते-होते बच्चे को डी० पी० टी०, बी० सी० जी० तथा चेचक के टीके लगा दिये जाएं व पोलियो वैक्सीन की खुराक दे दी जाए और यदि उपलब्ध हो तो खसरे का टीका भी लगवा दिया जाए।

(ख) जहां पर दो या तीन वैक्सीन एक साथ बताई गई हैं, जैसे बी०सी० जी०+डी० पी० टी० और पोलियो; ये वैक्सीन एक ही समय मे दी जा सकती हैं।

3. (क) विभिन्न वैक्सीन जब तक कि मिश्रित वैक्सीन के रूप में मिली न हो, उदाहरण के तौर पर डी० पी० टी० तथा डी० टी० इन्हें एक 'सीरिंज' में नही मिलाना चाहिए। बेहतर यही है कि अलग-अलग वैक्सीन अलग-अलग स्थान पर लगाई जाएं।

(ख) अगर टाइफायड का टीका पहली बार लगाया जा रहा हो, तो 1-2 महीने के अन्तर से दो टीके लगाए जाने चाहिएं।

(ग) अगर किसी बच्चे को डी० पी० टी० का टीका लगा हो और उसे चोट लग जाए तो, उसे धनुपबाय, धनुपटंकाररोधी टीका नहीं लगाना चाहिए। उसे इसके बजाय डॉक्टर की सलाह से टिटेनस टॉक्साइड का एक संवर्धक (बूस्टर) टीका लगाया जा सकता है। इस संवर्धक (बूस्टर) टीके (टिटेनस टॉक्साइड) से कम-से-कम पांच वर्ष तक प्रतिरक्षण मिलता है।



प्रतिरक्षण

तालिका



जिसको प्रतिरक्षित करना है	किस टीके के द्वारा	किस आयु में	कितनी खुराकें	खुराकों के मध्य समय का न्यूनतम कितना फर्क होना चाहिए
	टी० टी०	16-36 सप्ताह की गर्भावस्था के दौरान		

	डी० पी० टी० पोलियो (ओरल) बी० सी० जी० खसरा	3-9 माह 9-12 माह	3 3 1 1	1 माह 1 माह — —
	डी० पी० टी० बूस्टर पोलियो खुराक	18-24 माह	1	—

	डी० टी० (बूस्टर) टाइफाइड टी० टी० (बूस्टर) टी० टी० (बूस्टर) टाईफाइड (बूस्टर)	5-6 वर्ष 5-6 वर्ष 10 वर्ष 16 वर्ष 16 वर्ष	1 2 1 1 1	— 1 माह — — —

रोकी जाने वाली अनेकों बीमारियों से अपने बच्चों का प्रतिरक्षण व बचाव करिए

डी० पी० टी० ओ० पी० वी० डी० पी० टी० बी० सी० जी० ओ० पी० वी० डी० पी० टी० ओ० पी० वी० खसरा	डी० पी० टी० ओ० पी० वी०	डी० टी०/टी० टी० टी०ए०	टी०टी०
0-1 वर्ष	1-2 वर्ष	3-16 वर्ष	वयस्क (गर्भवती स्त्री)

खाद्य-पदार्थों में मिलावट से होने वाले रोग

खाद्य पदार्थों में आजकल बहुत मिलावट चल रही है, जिससे बच्चों व लोगों का स्वास्थ्य खराब हो रहा है। मिलावटी पदार्थ वह होता है, जिसके गुण या पोषक तत्व कम या गडबड कर दिये जाएं। चाहे वह किसी पदार्थ के पोषक तत्व निकालने के कारण हों या कोई ऐसी चीज मिलाने से हों, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

बेईमान और लालची दुकानदार या व्यापारी जल्दी धनवान बनने के लिए खाद्य पदार्थों में अपमिश्रण या मिलावट कर देते हैं। चीजों की कमी होने पर वह प्राप्त थोड़ी चीजों में व्यर्थ के ऐसे पदार्थ मिलाकर जो स्वास्थ्य के लिए हानिकर हैं, स्थिति का अनुचित लाभ उठाते हैं। इन समाज-विरोधी व्यक्तियों ने मिलावट के पदार्थ और घटिया पदार्थों के निर्माण के लिए कारखाने बना रखे हैं।

मिलावट से खाद्य-पदार्थ को पोषण-मूल्य कम हो जाता है। यह स्वयं ही काफी बुरी बात है। किन्तु इससे भी बुरी बात तो यह है कि मिलावटी खाद्य-पदार्थ आपके स्वास्थ्य पर जल्दी या देर में कई तरह से प्रतिकूल असर डालते हैं। इससे अंधता, पक्षाघात अथवा अर्बुद हो सकते हैं।

यदि मिलाई जाने वाली वस्तु दूषित या छूत के कीटाणुओं से युक्त होगी, तो उससे हैजा, टाइफाइड, अतिसार जैसे छूत के रोग हो सकते हैं। उदाहरण के लिए दूध में पानी मिलाया जाता है। इससे दूध का गुण घट जाता है। किन्तु यदि यह पानी सड़क के पास के गढ़े का गन्दा या दूषित पानी हो तो वह दूध स्वास्थ्य के लिए गम्भीर खतरा बन जाता है। इसके अतिरिक्त छाछ या लस्सी भी दूध में मिले गन्दे पानी के कारण उतनी ही दूषित हो जाती है। दूध, आटा, खोवा, छेना, घी, मक्खन, खाने वाले तेल, चाय, काफी, हल्दी, पिसी हुई मिर्च, मामले आदि सामान्यतः हमारे खान-पान की बहुत चीजों में ऐसी चीजों की मिलावट की जा सकती है, जो हमारे स्वास्थ्य को हानि पहुंचाती है।

यहां हम कुछ सामान्य खाद्य पदार्थों का तथा उनमें मिलायी जाने वाली वस्तुओं और उनके स्वास्थ्य पर संभावित हानिकारक प्रभावों का वर्णन करेंगे।

खाद्य पदार्थ	मिलावट वाला पदार्थ	प्रभाव
सरसों का तेल	आरगेमोन आयल	नजर की कमजोरी, हृदय रोग और अर्बुद, महामारीय जल-शोथ जो बेरी-बेरी रोग से मिलता-जुलता है।
खाने वाले तेल जैसे गिरी का तेल, बादाम का तेल	खनिज तेल	जिगर में खराबी, कैंसरीय प्रभाव (जिसके कारण कैंसर हो जाता है)।
अरहर या चने की दाल का बेसन	खेसारी दाल	पक्षाघात।
हल्दी	लैडक्रोमेट (पीला)	रक्ताल्पता, मिर्गी के दौरे, अन्धापन।
मिठाइयां और फेनिल जल	अखाद्य रंग	जिगर की खराबी और कैंसर
सुरा आदि पेय	विषैले तत्व	अन्धता और बड़े पैमाने पर मृत्यु।
पिसी हुई मिर्च और अन्य मसाले	लकड़ी का बुरादा	पेट की बीमारियां।

क्या मिलावट का पता लगाया जा सकता है ?

जनसाधारण द्वारा कुछ खाद्य पदार्थों में मिलावट का पता लगाने के कुछ जाने-माने तरीके हैं। किन्तु अपने इलाके की खाद्य-प्रयोगशाला में उसे मिलावटी पदार्थों का वैज्ञानिक विश्लेषण करना जरूरी है। ऐसी प्रयोगशालाओं के विश्लेषण के आधार पर ही मिलावट करने वालों पर कानूनी कार्रवाई की जा सकती है।

नीचे कुछ ऐसे परीक्षण बताये गये हैं। ये परीक्षण लैब में आसानी से किए जा सकते हैं। कुछ साधारण परीक्षाओं से इस बात का पता लग सकता है कि हमारा खाद्य पदार्थ मिलावटी है या नहीं।

खाद्य पदार्थ	मिलावट की वस्तु	मिलावट का पता लगाने के लिए साधारण परीक्षण
1	2	3
घी या मक्खन	वनस्पति	एक चम्मच पिघला हुआ घी या मक्खन और इतनी ही मात्रा हाइड्रोक्लोरिक एसिड एक परखनली में लें। इसमें एक चुटकी खाड मिला दें। एक मिनट तक इसे अच्छी तरह हिलाएं और फिर 5 मिनट तक इसे खड़ा रखें। यदि परखनली के निचले भाग में गहरा लाल रंग दिखाई दे तो घी या मक्खन में वनस्पति की मिलावट है।
दूध	पानी	लैक्टोमीटर यन्त्र की रीडिंग 1.026 से कम नहीं होनी चाहिए। बर्तन में से दूध की एक बूंद किसी सपाट पॉलिश की हुई जगह पर डालें। यदि वह अपने पीछे एक सफेद निशान छोड़ती हुई धीरे-धीरे आगे बढ़े या स्थिर रहे तो दूध शुद्ध माना जा सकता है। मिलावटी दूध की बूंद कोई भी निशान छोड़े बिना, तुरन्त आगे चल पड़ती है।
	श्वेत (स्टार्च)	थोड़े से दूध में टिंक्चर आयोडिन मिला दें। यदि वह नीला हो जाए तो समझ लें कि उसमें स्टार्च मिलाया गया है।
खाने वाले तेल	आरगेमोन ऑयल (ऊट-कटेली का तेल)	सेम्पल (नमूने) में गाढ़ा नाइट्रिक एसिड मिलाकर उसे सावधानी से हिलाएं। लाल से लाली लिए भूरा रंग यदि

1	2	3
		एसिड की परत पर आ जाये तो, उससे पता चलता है कि उस तेल में आरजेमोन तेल मिला है ।
	खनिज तेल	खाने वाला तेल 2 मिलीलीटर लेकर उसमें उतनी ही मात्रा में एन/2 अल्कोहलिक पोटाश मिला दें । उबलते हुए पानी के बर्तन में रखकर उसे लगभग 15 मिनट तक गरम करें, उसमें 10 मिलीलीटर पानी और मिला दें । उसमें गंदलापन हो जाए तो, यह इस बात का द्योतक है कि उसमें खनिज तेल की मिलावट है ।
	अरण्डी का तेल	एक परखनली में पेट्रोलियम ईथर में थोड़ा तेल मिला दें और इसे बर्फ और नमक मिले हुए मिश्रण में ठंडा करें । 15 मिनट के भीतर गंदलापन होना, उसमें अरण्डी के तेल की मिलावट का द्योतक है ।
मिठाई, आइस-क्रीम, शर्बत	मेटानिल पीला (एक गैर-मंजूर कोलतार रंग)	पदार्थ में से थोड़े गर्म पानी के साथ कुछ अंश निकाल लें, उसमें गाढ़े हाइड्रोक्लोरिक एसिड की कुछ बूंदें मिला दें, यदि मेजेण्टा लाल रंग हो जाए तो, वह उस पदार्थ में 'मेटानिल पीला' रंग की मिलावट का संकेत है ।
हल्दी	मेटानिल पीला	एक परखनली में एक चम्मच पिसी हुई हल्दी लें । उसमें कुछ बूंदे गाढ़े हाइड्रोक्लोरिक एसिड की मिला दें । यदि

1	2	3
		तुरन्त बैंगनी रंग दिखाई दे, जो पानी मिलाने से दिखाई न दे तो समझ लें कि उसमें हल्दी है। यदि रंग बना रहे तो वह 'मेटानिल येलो' का संकेत है।

पाठशाला में स्वास्थ्य और शिक्षा

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थान के एक महत्वपूर्ण प्रकाशन 'दिल्ली के चुने हुए माध्यमिक स्कूलों में स्वास्थ्य कार्यक्रम (1970)' के अनुसार पाठशाला में स्वास्थ्य शिक्षण के निम्नांकित सामान्य सिद्धांत होने चाहिए :—

1 स्वास्थ्य-शिक्षण बालकों और उनके परिवारों तथा समुदायों की आवश्यकताओं और रुचियों पर आधारित होना चाहिए।

2 स्वास्थ्य-शिक्षण में स्वास्थ्य संबंधी व्यवहार पर प्रभाव डालने वाले सभी मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय, सांस्कृतिक और आर्थिक कारणों पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

3. वैज्ञानिक रूप से सही पाये गये स्वास्थ्य संबंधी तथ्यों को ही काम में लाया जाना चाहिए।

4 व्यावहारिक समस्या निदान परिस्थितियों में भाग लेते हुए विद्यार्थियो को अपनी परिपक्वता के स्तर के अनुसार सीखने का अवसर दिया जाना चाहिए।

5. स्वास्थ्य शिक्षण पाठशाला के पाठ्यक्रम का एक अतरंग भाग होना चाहिए तथा सीखने के ठोस सिद्धान्तों पर आधारित होना चाहिए।

6. स्वास्थ्य शिक्षण पाठशाला-समुदाय के सम्पूर्ण स्वास्थ्य कार्यक्रम व भलाई के प्रमाणों का अंतरंग भाग होना चाहिए।

इन सिद्धान्तों के अनुसार स्वास्थ्य शिक्षा आयोजन मे यह ध्यान रखना चाहिए कि उपयुक्त नेतृत्व प्रदान किया जाए। कभी शिक्षक उसमें भाग लें, आयोजन निरंतर हो, विद्यार्थियों को आयोजन क्रियाओं में भाग लेने दिया जाए तथा शाला के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के अंतरंग अंग के रूप मे ही स्वास्थ्य शिक्षा का कार्यक्रम आयोजित किया जाए। आयोजन कोरा कागजी ही न रहे, बल्कि उसके अनुसार ठोस कार्य हो।

अध्याय-5

बालकों की स्वच्छता, स्वास्थ्य रक्षा और व्यायाम

माता-पिता और शिक्षकों व आंगनवाड़ी कार्यकर्त्ताओं को बालकों की स्वच्छता, स्वास्थ्य रक्षा और व्यायाम की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। गंदगी, अस्वस्थ वातावरण, बुरी आदतों और लापरवाही से बालकों का स्वास्थ्य खराब हो जाता है और उनके विकास में बाधाएं आ जाती हैं।

स्वच्छता

स्वच्छता के अन्तर्गत स्वच्छ घर में रहना, शरीर के अंगों की सफाई तथा वस्त्रों व काम में आने वाली वस्तुओं की सफाई आती है। जिस कमरे में गर्भवती स्त्री को प्रसव के लिए रखा जाये वह खुला, साफ व भली-भांति हवा के आवागमन वाला होना चाहिए। बालकों को साफ कमरे में खेलने व उठने-बैठने दिया जाना चाहिए। गंदी जमीन पर नंगे पांव घूमने व खेलने-कूदने से उनको टिटेनस व अन्य कृमि रोग हो सकते हैं। घर की पुताई होनी चाहिए। मक्खी-मच्छर भगाने के लिए डी० डी० टी० व अन्य दवाओं को छिड़कना चाहिए। फर्श पर फिनायलयुक्त पानी से पोंछा लगाया जाना चाहिए। घर में ही या उसके आस-पास पालतू पशुओं को नहीं बांधना चाहिए। घर के पास पेड़ों के नीचे नहीं सोना चाहिए। क्योंकि पेड़ रात को कार्बनडाइ ऑक्साइड गैस छोड़ते हैं।

बच्चों के शरीर की नियमित सफाई करना आवश्यक है। जन्म लेने वाले बच्चे के शरीर की सफाई उबालकर कीटाणुरहित की गई रुई से करनी चाहिए। दाई के हाथ साबुन से भली-भांति साफ होने चाहिए। मिलने-जुलने आने वालों से बच्चे को किसी भी बीमारी का संक्रमण न हो जाये, इसका

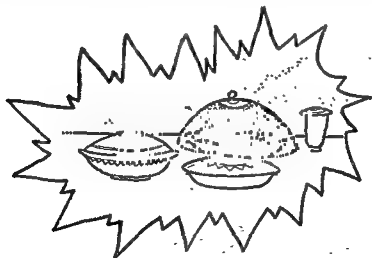
विशेष ध्यान रखना चाहिए। उन्हें छोटे शिशु को चूमने नहीं देना चाहिए। शिशु को पुराने गंदे वस्त्र नही पहनाने चाहिए। घटिया साबुन से बालको को नही नहाना चाहिए। गदे पानी में नहलाने से बच्चो को चर्म रोग हो सकते हैं। बच्चो की पेशाब व पाखाने से गीली चड्ढियों को बार-बार बदलते रहना चाहिए, ताकि उन्हें चर्म रोग, ठंड आदि न हो जाये। सूखे व मुलायम वस्त्रों या तौलिए से उन्हे पोछना चाहिए। दूध पीने या भोजन करने के बाद बच्चो को नहीं नहाना चाहिए। बच्चो को साफ बोतलो से साफ दूध मिले, यह ध्यान रखना चाहिए। उनके नाखूनों को नियमित रूप से काटा जाना चाहिए। बच्चो को दांत साफ करना सिखाना चाहिए। टूथपेस्ट या मुलायम मंजन का प्रयोग होना चाहिए। मीठी चीज खाने के बाद कुल्ला करने की आदत डालना आवश्यक है। दांतो की सफाई की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। उनके कान मे मुलायम रुई के फोये से सफाई की जा सकती है। सलाई, माचिस की सीली, पिन आदि से कान नहीं साफ करना चाहिए। कान में कीड़ा या मच्छर चला जाये तो, एक बूद सरसो का तेल या स्प्रिट डालें, व फिर रुई से कुछ घंटो बाद साफ करें। कान बहने की अवस्था में रोगी को डॉक्टर को दिखाना चाहिए।

बच्चो को धूल, गंदगी, धुए से दूर रखना चाहिए। उन्हे बार-बार जुकाम होने पर डॉक्टरी चिकित्सा करानी चाहिए। एक दूसरे के रूमालो व तौलियो से बच्चे की नाक नही पोछनी चाहिए। यदि नाक बहना दो-तीन दिनों तक न रुके या नाक मे बटन, अनाज का दाना आदि फंस जाये तो, डाक्टर को दिखाना चाहिए।

उनकी आंखो की स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। उनमे सुरमा, काजल व गंदी व तारीख समाप्ति की दवाए नही डालनी चाहिएं। उन्हे गदे कपड़ों से नही पोछना चाहिए। दुखती आखो की सही डॉक्टरी परामर्श के अनुसार चिकित्सा करना चाहिए। दस्त-रोग होने पर कमजोरी से उनकी आंखों की हानि न हो, इसके लिए उन्हें विटामिन 'ए' और 'सी' और प्रोटीन की खुराक देते रहना चाहिए। बच्चो को धूल-मिट्टी मे नही खेलने देना चाहिए। गदे बरसाती पानी या तालाब पोखर के पानी में, उन्हे नही नहलाना चाहिए। बच्चों की आंखो में रेत के कण, कोयले के कण, गंदगी के कीटाणु, मक्खी का मल आदि न पड़ने देना चाहिए।

बच्चों को गंदे व खराब प्लास्टिक के खिलौने खेलने को नहीं देने चाहिएं, क्योंकि उनमे टॉन्सिल और बीमारियों के कीटाणु होते हैं।

गंदे कपड़े पहनाने से व धोबी के धुले कपड़े पहनाने से बालकों को व वयस्कों को कई प्रकार के संक्रामक रोग हो सकते हैं। आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने अपनी पुस्तक 'स्वास्थ्य रक्षा' मे ठीक ही लिखा है, "सब लोग यह नहीं जानते कि बहुत-सी बीमारियो का तांता धोबियों के यहां से ही लगता है। देखने;में तो वे कपड़े धोकर साफ-चिट्टे करके आपको दे देते हैं, पर प्रायः खुजली या दूसरी जाति के कीटाओं से भरे दूसरों के कपड़े एक साथ धोने के कारण उन रोगों के बहुत से कीटाणु दूसरो के स्वच्छ कपड़ों पर भी लग जाते हैं। प्रायः धोबी लोग कपड़ों को नदी नालो या गढ्ढों के पानी में धोते हैं, जिनका पानी बहुधा गन्दा रहता है। इसके अतिरिक्त जिन कोठरी में वह कपड़ों पर इस्तरी करता है, वहां कई दिन तक कपड़े यों ही पड़े रहते हैं, धुले हुए और बिना धुले हुए भी। इस तरह धोबी के घर पर कपड़ों में हैजा, चेचक,



दाद, खाज और चमड़ी के कीटाणु भर जाते हैं...धोबी के यहां से आये हुए कपड़ो को कम-से कम 3-4 घंटे तेज धूप मे फैलाकर रखने के बाद ही उन्हे बॉक्स में रखना चाहिए।"

स्वास्थ्य रक्षा

भारतीय घरों में कूड़ा-करकट घर के कोने में ही या बाहर ही डालने की आम प्रथा है। इससे गंदगी फैलती है। घर के गंदे स्थानों को पानी से धोना चाहिए। तथा पक्के फर्श पर फिनायल के घोल से पोंछा लगाना चाहिए। बड़े बालकों को यह सिखाना चाहिए कि किस प्रकार चौखटों, शीशों, बिस्तरों, फर्नीचर आदि की भली-भांति सफाई करें। धातु के बर्तनों पर व घर की आम घरेलू वस्तुओं को भली-भांति साफ रखना चाहिए। जूठे बर्तनों से बालकों को कभी नहीं खाने-पीने देना चाहिए। मक्खियों से भोजन पदार्थों को बचाकर रखना चाहिए। घर के सभी कोनों की नियमित सफाई करते रहना चाहिए ताकि मच्छर व जहरीले कीड़े-मकोड़े उनमें अपना घर न बना सकें। मक्खी, मच्छरों, चींटियों, सफेद चींटियों, खटमलों, प्लेग व पिस्सुओं आदि को मारने के लिए उपयुक्त दवाओं को प्रयोग में लाया जाना चाहिए। ऊनी कपड़ों को समय-समय पर धूप में सुखाते रहना चाहिए। घर में सीलन न रह पाये, इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए। पीने के पानी को भली-भांति ढंके रहना चाहिए तथा हाथ डालकर नहीं निकालना चाहिए। छिपकली, चूहे, कीट-पतंगे उसे खराब न कर सकें। खाना-पकाने के बर्तनों का भली-भांति कलई किये होना आवश्यक है।

स्वास्थ्य रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि स्त्रियां सही प्रकार से खाना पकाना सीखें, ताकि पोषणयुक्त भोजन तैयार हो सके। खाना पकाने में निम्नांकित सुझावों का पालन करना हितकर रहता है :—

1. चावल, दालों को कम-से-कम पानी में धोएं।

2. चने, लोबिये, राजमा, दालों आदि को कम-से-कम पानी में भिगोएं।

3. चावल, दालें आदि धीरे-धीरे बिना रगड़े धोयें ताकि उनकी ऊपरी सतह पर पाये जाने वाले विटामिन घुलकर नष्ट न हो जाएं।

4. बिना चोकर छाने आटे की रोटी बनायें, क्योंकि चोकर में विटामिन 'बी' होता है।

5. आटा रोटी बनाने से एक दो घण्टा पहले गूंथें। इससे रोटी फूली और स्वादिष्ट बनती है। कभी-कभी रात को गूंथ कर रखा गया आटा खमीर उठने के कारण फूल जाता है। उसकी रोटी हाज़मेदार होती है।

6. दो-तीन छोटे चम्मच चूने का साफ पानी मिलाकर रोटी का आटा गूंथने से भोजन में कैलशियम की कमी नहीं रहती ।

7. जिस पानी में चावल, दालें आदि भिगोएं, उसी में उन्हें पकायें ।

8. यथासंभव दालों को प्रेशरकुकर में जल्दी पकायें, क्योंकि देर तक पकाने से उनके विटामिन नष्ट होते हैं ।

9. दालों को पकाते समय चम्मच न चलायें वरना वे देर में गलती हैं । उन्हें नमक डालकर पकाया जाए ।

10 राजमा, चने आदि को सोडा डालकर नहीं पकाना चाहिए ।

11. चावल पकाने में उतना ही पानी डालना चाहिए कि मांड न बचे । मांड कभी नहीं निकालना चाहिए ।

12 इमली, अमचूर आदि की खटाई दाल गल चुकने के बाद मिलाई जानी चाहिए ।

13. सब्जियां काटने से पहले ही धोयी जायें, बाद में नहीं । उनके बड़े-बड़े टुकड़े काटें । यथा-सम्भव छिलकों समेत उन्हें काटें । उन्हें उतने ही पानी में पकायें जितने में वे गल जाए । जहां तक उन्हें प्रेशरकुकर में पकाया जाए तथा इमली, खटाई या टमाटर सब्जी बन जाने के बाद ही उसमें मिलायें ।

14. पत्तेवाली सब्जियों के लिए लोहे की कड़ाही का प्रयोग न करें, पीतल या स्टेनलैस स्टील की कड़ाही का प्रयोग करें ।

स्वास्थ्य रक्षा के अन्तर्गत पर्याप्त निद्रा और बैठने व काम करने के आसन भी आते हैं, अत. उनकी ओर भी ध्यान देना चाहिए।

निद्रा : निद्रा से शरीर के अधिकांश अंगो को पूर्ण विश्राम मिलता है । विभिन्न आयु में निम्नानुसार नींद लेनी चाहिए :—

1 वर्ष की आयु तक के बालकों के लिए	=20-22 घंटे
2 वर्ष से कम आयु के बालकों के लिए	=16 घंटे
4-6 वर्ष	=14 घंटे
6-8 वर्ष	=12 घंटे
8-12 वर्ष	=11 घंटे
12-14 वर्ष	=10 घंटे
14-20 वर्ष के लड़के लड़कियां	= 9 घंटे

सोने का कमरा हवादार, साफ, सुन्दर होना चाहिए। खाट या पलंग कसी होनी चाहिए, ताकि रीढ की हड्डी मुड़ी न रहे। एक पलंग पर एक से अधिक नही सोना चाहिए। एक-दो माह तक का बच्चा मां के पास सोये, बाद मे धीरे-धीरे उसे अलग सुलाने की आदत डालें। सोने के कमरे का तापक्रम न तो कम हो और न ज्यादा। बिस्तरा आरामदायक हो। छोटे शिशु के बिस्तरे मे चादर के नीचे मोमजामा या प्लास्टिक बिछाया जाये। सोने का स्थान शोरगुल से दूर हो। मच्छरों से बचने के लिए मच्छरदानी, जालीदार किवाड़ों, ओडोमास मलहम, कछुआ छाप अगरबत्ती का प्रयोग किया जाना चाहिए। छोटे बच्चों को भरपेट दूध पीने के बाद और कुछ बड़े बच्चो को लोरी की कहानी सुनते हुए सोना स्वाभाविक लगता है। रात में बच्चों की नींद डर या शोरगुल से न नष्ट हो, उसकी पूरी व्यवस्था करनी चाहिए। उन्हे जमीन पर नही सुलाना चाहिए। बिस्तरा जमीन से ऊंचा ही होना चाहिए।

आसन

उचित आसन का अर्थ है शरीर का इस प्रकार साधे रहना कि कम-से-कम थकान का अनुभव हो। अनुचित शारीरिक आसानो से बालकों को थकान, उदासी व अस्वस्थता अनुभव होने लगती है। उनके शरीर मे कई प्रकार के विकार उत्पन्न हो सकते हैं यथा धसे हुए झुके कन्धे आदि।

अनुचित आसनो के कई कारण होते हैं यथा—घरो मे पढ़ने के लिए प्रकाश का अभाव या कमी, पौष्टिक भोजन का अभाव, भारी वस्त्र पहनना, अपर्याप्त नींद व आराम न मिल पाना, आखो और कानो मे दोष उत्पन्न होना, विद्यार्थियों के कद के अनुसार कुर्सी व डेस्कों का न होना। लगातार लिखित कार्य करना तथा शिक्षकों द्वारा अनुचित आसनों का सुधार न करना।

कुछ उचित आसन इस प्रकार हैं :—

1. खड़े रहने का आसन—शरीर का भार दोनो पैरो पर समान रूप से रखा जाये, पैरों की एड़ियां इस प्रकार समतल जमीन पर रखें कि पैरों की मासपेशियों पर कोई भी बल न पड़े और सिर तथा कमर दोनो सीध मे रहें। छाती देर या आवश्यकता से अधिक बाहर निकली न रहे और हाथ भी सीधे शरीर से चिपके रहें।

2. बैठने का आसन—मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) में किसी प्रकार का टेढ़ापन न हो। सिर का भाग कंधे, नितम्ब सब एक ही सीध मे रहे तथा दोनों ही भुजाओं का संतुलन ठीक रहे। दोनो जाघ भी एक सीध में हो तथा टांगें पैरों पर सीधी टिकी रहें।

3. पढ़ने का आसन—आंखो से पुस्तक लगभग एक फुट दूर रहे तथा 45° का कोण बनाती रहे। सिर पूर्ण तथा सीधा रहे। आंखें पुस्तक की सीध से बहुत नीचे न रहें। प्रकाश बाईं ओर से या पीछे से आये।

4. लिखने का आसन—डेस्क के अंदर कुर्सी का आतरिक भाग आ जाए। सीधी कमर करके कुर्सी पर बैठा जाए। कुर्सी पर जाघें सीधी रहें और पैर फर्श पर रखे हो। कापी से आंखें लगभग एक फुट दूर रखें। प्रकाश बाईं ओर या पीछे से आये।

व्यायाम

बालकों को घर पर तथा नर्सरी शाला व पाठशाला मे पर्याप्त खेलकूद और व्यायाम कराना चाहिए। खेलकूद के द्वारा ही बालको का काफी व्यायाम हो जाता है। बड़े बच्चो को कसरत व योग भी कराया जा सकता है। यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि खेलकूद, कसरत या योग जो भी करवाया जाए वे खुले वातावरण से हों, बालको की आयु स्तर व रुचियों के अनुरूप हो, उससे बालकों के शरीर को किसी प्रकार की हानि न हो तथा वह स्फूर्तिदायक हो। बालको को भाग-दौड़ के मनोरंजक खेल खिलाये जा सकते है जो उन्हें अच्छा लगे। हमारे ग्रामीण क्षेत्रो मे कई रोचक खेल प्रचलित हैं, जिन्हे अपनाय जा सकता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि खेल, कसरत या व्यायाम जो भी हो, उसे बालक खेल की भावना से लेते रहें, उसे बोझा या कार्य न समझें।

अध्याय-८

विकलांग बालक

"विकलांगों को दया न दीजिए, सहानुभूति दीजिए, उन्हें दान न दीजिए, अपितु साथी मानव के उनके अधिकार दीजिए।"

—स्वर्गीय श्रीमती इन्दिरा गांधी

बाधाग्रस्त या विकलांग बालकों से तात्पर्य उन बच्चों से है, जो कि शारीरिक, मानसिक, इंद्रिय अयोग्यताओं से ग्रस्त हों। प्राय: निम्न प्रकार की विकलांग करने वाली दशाओं से ग्रस्त बालक प्रत्येक समाज में मिलते हैं :

—मानसिक रूप से पिछड़े या अशक्त।

—धीमी गति से सीखने वाले।

—भाषा या वाणी के दोष वाले।

—पूर्णतया या आंशिक रूप से बहरे।

—नेत्रहीन।

—ठीक तरह से न चल-फिर सकने वाले।

—सीखने में विशेष कठिनाइयां अनुभव करने वाले।

—व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं वाले बच्चे।

—ठीक तरह से सामंजस्य न बिठा सकने वाले और मनोवैज्ञानिक समस्याओं वाले।

—इनमें से कई तरह की मिली-जुली दशाओं से ग्रस्त।

विकलागता का कितना अधिक प्रसार है यह निम्नांकित तथ्यों से प्रकट होता है :—

1 संसार में पैदा होने वाले बालको में से 2 से 5 प्रतिशत बालक जनवंशीय खराबियों, जैसे हाथ-पाव में छ: छ: उगलियां होना, मानसिक पिछड़ापन, चपटा पांव आदि से ग्रस्त होते हैं। भारत मे चार दक्षिणी राज्यो आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु मे द्रविड़ों मे घनिष्ट सम्बन्धियों के बीच विवाह करने के कारण ऐसा अधिक देखने में आता है। वहां अनुमानतः 25000 बच्चो में से 60 बच्चे इस प्रकार प्रभावित होते हैं।

2. विश्व मे आज 50 करोड़ से भी ज्यादा व्यक्ति बाधाग्रस्त हैं।

3. हर दसवां बच्चा किसी-न-किसी दोष के साथ पैदा होता है या उनमें किसी कारण दोष आ जाता है। ये बच्चे अन्धे या बहरे हो जाते हैं या मानसिक या शारीरिक रूप से पिछड़ जाते हैं।

4. वर्ष 2000 तक संसार में विकलांगों की संख्या कम-से-कम 60 करोड़ तक हो जायेगी।

5. केन्द्रीय योजना मन्त्री श्री एस०बी० चह्वाण के अनुसार भारत मे 1.2 करोड लोग गभीर मानसिक अव्यवस्थाओ की दशाओं से ग्रस्त हैं। प्रति वर्ष 2.5 लाख लोगो की संख्या इसमे जुडती जा रही है। बच्चों में मानसिक पिछड़ेपन की दर 0.5 से 1 प्रतिशत है, जो बहुत सोचनीय स्थिति है। जहा तक सुविधाओं की बात है स्थिति इतनी खराब है कि 32,500 मानसिक रोगियों के पीछे मानसिक चिकित्सालय का एक बैड (बिस्तरा) आता है।

6 भारत मे इस समय लगभग 90 लाख नेत्रहीन हैं।

7. विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा संकलित तथ्यों के अनुसार विकसित औद्योगिक देशों की तुलना में विकासशील देशों में 10 से 40 गुना अधिक नेत्रहीनता की दर पाई जाती है। विश्व में 1.7 करोड़ नेत्रहीन मोतियाबिन्द के कारण और 90 लाख नेत्रहीन ट्रेकोमा के कारण हैं। इनको बहुत कम लागत के उपचार से बचाया जा सकता था।

8. भारत के 90 लाख नेत्रहीनों में से 50 लाख मोतियाबिन्द के कारण नेत्रहीन बने हैं, जबकि 100 रु० से कम खर्च के एक सरल ऑपरेशन द्वारा

उनमें से प्रत्येक को नेत्रहीन होने से बचाया जा सकता था। में इस समय विश्व भर में 4 2 करोड़ लोग नेत्रहीन हैं, आगामी बीस वर्षों में उनकी संख्या दुगुनी हो सकती है।

9. भारत में बाल जनसंख्या का लगभग 10 प्रतिशत भाग बाधाग्रस्त है। एक बाधाग्रस्त या विकलांग बालक की शिक्षा पर ही लगभग 900-1000 रु० प्रति वर्ष व्यय होता है। अत: सभी विकलांग बालकों की शिक्षा की व्यवस्था करनी हो तो देश को 3000 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष व्यय करने पड़ेंगे।

10. 1981 में नेशनल सैम्पल सर्वे ऑरगेनाइजेशन ने सारे भारत में 5409 सैम्पल ग्रामों और 3652 नगरीय ब्लाकों में सर्वेक्षण करके पता लगाया था कि बाधाग्रस्त व्यक्तियों की संख्या ग्रामीण क्षेत्रों में 81% है जबकि नगरीय क्षेत्रों में 19%, पुरुषों में 57% जबकि स्त्रियों में 43%। उक्त सर्वेक्षण के अनुसार देश की 68 करोड़ जनसंख्या का 1·8% भाग (अर्थात् 1 करोड़ 20 लाख लोग) कम-से-कम एक बाधा से ग्रस्त हैं, जबकि लगभग 10% लोग एक से अधिक बाधा या विकलांगता से ग्रस्त हैं।

विकलांगता के प्रमुख कारण

यूनिसेफ के अनुसार बच्चों में विकलांगता के प्रमुख कारण निम्नांकित हैं :—

1. माताओं और बच्चों को भोजन में पोषक तत्व, जिनमें विटामिन और प्रोटीन भी आ जाते है, काफी मात्रा में न मिलना।

2. जन्म से पहले और बाद की असामान्य दशाएं तथा जन्म से पहले और जन्म के बाद क्षति-उत्पत्ति संबंधी बातें।

3. छूत की बीमारियां।

4 दुर्घटनाएं और।

5. विभिन्न अन्य कारण जैसे—पर्यावरण का दूषण, युद्ध, प्राकृतिक और मनुष्यकृत विनाश, गर्भावस्था में कई बार एक्स-रे करवाना, निकट संबंधियों के बीच विवाह इत्यादि।

विकलांग बालकों की समस्याएं

विकलांगता मे चार प्रमुख प्रकार है—दृष्टिहीन, मूक-बधिर, शारीरिक विकलांग तथा मानसिक रूप से बाधित । विभिन्न प्रेक्षको और विशेष शिक्षा के विद्वानो ने भारतीय विकलांग बालकों(विशेषकर ग्रामीण विकलांग बालको) की विविध समस्याओ पर अपने महत्वपूर्ण प्रेषण दिये हैं। उनकी समस्याओं को छ भागो मे विभाजित किया जा सकता है :—

1. शारीरिक विकृतिजन्य समस्याएं।
2 भावनात्मक समस्याए ।
3. शिक्षा संबंधी समस्याएं ।
4. मनोरजन संबंधी समस्याएं।
5 गृहकार्य संबंधी समस्याएं ।
6. पारिवारिक एवं सामाजिक स्वीकृति संबंधी समस्याए ।

शरीर के किसी अंग हाथ, पैर, आख, कान, नाक आदि मे विकृति होने से किसी भी बालक या बालिका का जीवन उन अनेक चेष्टाओ एवं क्रियाओ के अभाव से भर जाता है, जिनका सबध उस अग से होता है । "ग्रामीण परिवेश मे चिकित्सा के वे साधन नही होते जिनके द्वारा इन रोगो को प्रारंभ मे ही जाना जा सके और समय रहते उनका इलाज कराया जा सके । परिणामस्वरूप ये बच्चे ईश्वर की इच्छा पर ही छोड़ दिये जाते है । लडकों की अपेक्षा लडकियो की दशा और भी खराब रहती है, क्योंकि उन्हे पराये घर भेजने की चिन्ता वैसे ही माता-पिता को सताती रहती है । विकलांग होने पर तो, उन्हे लगता है कि दहेज मे बडी रकम के साथ एकाध नौकर भी देना पड सकता है। इन कारणो से उनकी अपेक्षा बढ़ जाती है और उनका शारीरिक कष्ट कई गुना बडा होकर उन्हे घेर लेता है ।"

अपग बालक बालिकाओ को निरोहण अथवा नैराश्य और पृथकत्व की भावनाए घेर लेती हैं। उनमे हीनता की ग्रंथियां जन्म ले लेती हैं। अन्य लोग उनका उपहास करते हैं और उनसे उन्हें मानसिक वेदना होती रहती है ।

विकलांग बालक-बालिकाओं की शिक्षा समस्या बहुत गम्भीर है। गांवों में उनकी व्यवस्था नही के बराबर है। शहरों में उनके लिए कुछ व्यवस्था है, लेकिन वह अपर्याप्त व अवैज्ञानिक है। प्राय: 'एकीकृत शिक्षा' की व्यवस्था सभी संस्थाओं में नही होती। फलस्वरूप नेत्रहीनो, बधिरो व मानसिक रूप से पिछड़े हुए बालकों की पाठशालाएं अलग होती हैं, जो अनुचित व्यवस्था है। सुयोग्य, प्रशिक्षित व सहानुभूतिपूर्ण शिक्षको का अभाव ऐसे बालको को पढ़ाने के लिए हर कही बना हुआ है। पाठशालाओ मे विकलांगो को शिक्षित करने के लिए आवश्यक पुस्तकें, उपकरण, शिक्षण आदि का घोर अभाव रहता है। ग्रामीण क्षेत्रों मे तो विकलांगों की शिक्षा बहुत ही कम और सोचनीय प्रकार की है। प्राय: किसी भी पाठशाला में उन्हें पोषक भोजन भी नही मिलता, चिकित्सा व उत्तम शिक्षा की तो बात ही क्या है।

ग्रामीण परिवेश में विकलांग बालक-बालिकाओं के लिए देहाती खेलो और त्यौहारों पर नाच और हंसी के अलावा कोई मनोरंजन नही है। फिल्म, टी० वी० और अन्य खेल व रुचि कार्य उन्हें उपलब्ध नहीं हो पाते।

ग्रामीण जीवन मे लड़कियो को मां के साथ मिलकर घर का काम करना अल्पायु मे ही शुरू करना होता है। अपंग होने या और किसी प्रकार से विकलांग होने पर तो वे बाहर के किसी भी कार्य को सक्रिय रूप से नही कर सकती, तब तो उन्हें पशुवत घरेलू कामों मे जुटा रहने को बाध्य होना पड़ता है।

विकलांगो, विशेषकर विकलांग लड़कियो की विवाह समस्या बहुत ही गंभीर है। धन या दहेज के लोभ मे लोग उनसे विवाह कर लेते हैं, परन्तु अधिकतर वे बेमेल विवाह होते हैं तथा निम्न स्तर के परिवारो मे होते हैं। ससुराल वाले भी विकलांग कन्याओ को बहुत सताते हैं। समाज मे उन्हें कदम-कदम पर तिरस्कार व उपहास का सामना करना पड़ता है। नौकरी या रोजगार उन्हें आसानी से नही मिलता। कुछ ही गिने-चुने काम उनके लिए खुले हैं, जैसे गाना-बजाना, सिलाई, छपाई, प्रेस-कम्पोजीटर, घरेलू नौकर का काम आदि। विकलांगो को प्राय. संपत्ति का उत्तराधिकारी बनाने से भी माता-पिता कतराते हैं। उन्हें प्राय: जिद्दी या दडनीय माना जाता है। ऐसे बालकों के प्रति माता-पिता, शिक्षकों, रिश्तेदारों व अन्य लोगों का व्यवहार असहानुभूति

या बहुत अधिक दया से भरा हुआ होता है। उन्हें दया की अपेक्षा सहानुभूति मदद, मार्गदर्शन और उचित शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। शारीरिक रूप से बाधित बालक-बालिकाओं को कृत्रिम अंग उपलब्ध करवाया जाना आवश्यक है, लेकिन उनके माता-पिताओं के पास न तो पर्याप्त धन ही होता है और न कृत्रिम अंग प्रदान करने वाली संस्थाओं से प्राप्त करने की विधि की पूर्ण जानकारी ही होती है। उन्हें उपयुक्त प्रकार का संतुलित पौष्टिक आहार नहीं मिल पाता। किशोरावस्था प्रायः अपंग बालिकाओं को वेश्यावृत्ति की ओर धकेलने के लिए सामाजिक दबाव काम करते हैं। विकलांगो के लिए कई व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र खुले हैं, लेकिन ग्रामीण विकलांगों को उनकी जानकारी तक नहीं होती। विकलांगो के लिए जो छात्रावास व आश्रम या कल्याण केन्द्र बनाये गये है, प्रायः उनमे हर प्रकार की बेईमानी, भ्रष्टाचार, गंदगी और अस्वास्थ्यकारी अवस्थाओं के व्याप्त होने की चर्चा सुनने में आती है। उनमें छूत की बीमारियां, कुपोषण व नैतिक आचरण की गिरावट होने का भय बना रहता है।

डॉ० प्रेम विक्टर के अनुसार, "ग्रामीण भारत मे विकलांगो की सहायता के लिए आवश्यक हैं—निर्देशन, निदान, सहायक वस्तुएं, शैक्षिक पुनर्वास और सामान्य पाठशालाओं मे उनका एकीकरण। पर्याप्त मात्रा में नियोजन, धन, कार्यकर्ता, साधन सामग्री आदि के बिना सफलता प्राप्त नही की जा सकती।"

अपने एक लेख मे इस पुस्तक के लेखक ने ग्रामीण भारत के विकलांगों, बालक-बालिकाओं को पृथक्करण, निराशा व असहायता के वातावरण में जीने को मजबूर होने के लिए जिम्मेदार दोषी, सामाजिक स्तरण, सामाजिक मूल्यो, बालकों को पालने की प्रथाओ, समाज-सेवी संस्थाओ का शोषणकारी व असंवेदनशील व्यवहार व प्रशासनिक अवस्थाओ को नंगा किया है।

डॉ० सीता सिनकेहमर द्वारा सम्पादित पुस्तक 'मानसिक बाधितो के लिए राष्ट्रीय योजना' मे मानसिक रूप से बाधित बच्चों के लिए कई उपयोगी निबंध हैं, जिनमे उनको सहायता पहुंचाने के लिए अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा घोषित विकलांग लोगों के अधिकार

1981 वर्ष विश्व भर में अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष के रूप में मनाया गया था। विकलांग लोगो को 'पूर्ण सहभागिता और समानता' प्रदान करने के लिए इस वर्ष मे कई कार्य हुए। उनके शारीरिक व मानसिक सामंजस्य बिठाने मे मदद करना, उन्हें सहायता, प्रशिक्षण, देखभाल संबधी निर्देशन और काम के अवसर जुटाना, विकलांगता को रोकने और विकलांग लोगो के पुनर्वास के प्रभावशाली उपायो को बढ़ावा देना और जनता को विकलांगों की समस्याओ से जागरूक करना उसके उद्देश्य थे।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा विकलांग लोगो के निम्नांकित अधिकारों की घोषणा की गई है :—

1. वे सब बुनियादी अधिकार जो अन्य लोगो के हैं और जहां तक संभव है सामान्य और अच्छा जीवन जीने का अधिकार।

2. अपने मानवीय गौरव के प्रति आदर पाने का अधिकार।

3. जहां तक हो सके, आत्म-निर्भर बनाने वाले साधन और सुविधाओं को पाने का अधिकार।

4. कौशल के विकास मे सहायता पहुचाने के लिए डॉक्टरी, मनोवैज्ञानिक और व्यावहारिक इलाज, पुनर्वास और काम मे लगाने वाली सेवाएं पाने का अधिकार, ताकि समाज मे समन्वित होने की प्रक्रिया की गति को बढ़ाया जा सके।

5 सामाजिक और आर्थिक योजना बनाने के सभी पदों पर उनकी विशेष जरूरतो का ध्यान रखे जाने का अधिकार।

6. अपने परिवार के साथ रहने और सभी सामाजिक, सृजनात्मक और मनोरंजनकारी क्रिया-कलापो मे भाग लेने का अधिकार। उन लोगो को, जिन्हें रहने के लिए विशेष तरह की जगहो की जरूरत है, जहां तक हो सके, सामान्य पर्यावरण और रहने की दशाओ को पाने का अधिकार है।

7. शोषण और भेदभाव से संरक्षण पाने का अधिकार।

8. कानूनी मदद पाने का अधिकार।

9. जाति, वर्ग, लिंग, धर्म, राष्ट्र और सामाजिक स्थिति चाहे कुछ भी हो, इन अधिकारों का लाभ उठाने का अधिकार।

विकलांगता की रोकथाम

विकलांगता की रोकथाम करना बहुत जरूरी है। इसके लिए यूनिसेफ तथा अन्य संस्थाओं ने कई महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं, जिनका पालन करवाया जाना चाहिए :

1. अपने आस-पड़ोस में देखें कि किन बच्चों का इम्यूनीकरण (टीके लगना) नहीं हुआ है। उनके माता-पिता को इम्यूनीकरण के महत्व के बारे में बताएं। उनका इम्युनीकरण करवाएं। आप मदद करें, क्योंकि सभी माता-पिता पूर्ण इम्युनीकरण के लिए नियमित खुराकों को देने का महत्व नहीं समझते। इम्यूनीकरण की तालिका पिछले अध्याय में दी जा चुकी है। उसके अनुसार सभी बच्चों को पोलियो, चेचक, डिप्थीरिया, टिटनस, टाइफाइड आदि के टीके लगवाएं व दवाएं दिलवाएं।

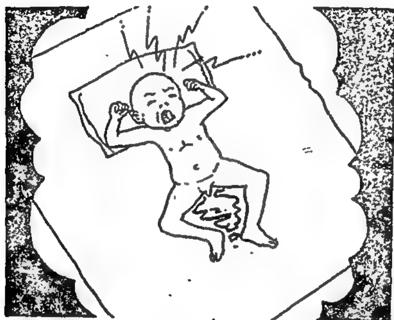
2. माताओं और बच्चों को पौष्टिक आहार देने के महत्व का समर्थन करें। भोजन में पोषक तत्वों जैसे—प्रोटीन, विटेमिन, कैलशियम, मिनरल साल्ट्स, आयोडीन आदि की कमी विकलांगता का कारण बन सकती है।

3. अपने बच्चे के आहार में हरे पत्तों वाली सब्जियां व दूध और मक्खन अधिक रखें। इनमें विटेमिन 'ए' बहुत अधिक होता है। इसकी कमी से बढ़ता हुआ बच्चा अंधा हो सकता है।

4. माताओं को बताएं कि वे बच्चों को जब तक हो सके अपना दूध पिलाएं और बच्चा जब 4-6 माह का हो, उसे मां के दूध के साथ ठोस आहार भी दें।

5. विकासशील देशों में लगभग आधे बच्चे दस्तों की बीमारी के कारण मर जाते हैं, क्योंकि उस समय उन्हें माताएं अज्ञानतावश कुछ भी खाने पीने को नहीं देती है और दस्तों के कारण शरीर से कई तरल पदार्थ और लवण निकल जाते हैं। अगर शरीर में इनकी पूर्ति न की जाये तो, बच्चे के शरीर में पानी की कमी हो जाती है, जिसके कारण बच्चा विकलांग हो सकता है और मर सकता है।

दस्त शुरू होने पर बच्चे को एक सादा घोल घर पर ही बना कर दिया जा सकता है। पानी उबालकर ठंडा करने पर एक गिलास पानी में एक चुटकी नमक और दो चम्मच चीनी डालें। हर बार दस्त होने पर बच्चे को यह घोल दें।



■ सभी नागरिकों का कर्त्तव्य है कि वे विकलांगों की सहायता करें। उनके साथ समय बिताएं, उन्हें कहानियां व सामान्य ज्ञान की बातें बताएं। उनके साथ खेलें व उनके खेल समूह बनाएं। उनकी पढाई व पुनर्वास के कार्य में तन, मन, धन से सहायता दें। उनसे सम्मानपूर्वक व्यवहार करें। उनके स्वास्थ्य और समस्याओं के बारे में प्रदर्शनियां लगाएं, उपयोगी वार्ताएं दें। उनके प्रति दया करने के स्थान पर सहानुभूति और सहायता का रुख अपनाएं।

अध्याय-7

बालक की प्रकृति

बाल-शिक्षा कैसी हो ? बालक के साथ कैसे व्यवहार करें ? बालक का पालन-पोषण कैसे करें ? इन सभी प्रश्नों का सही समाधान इस बात पर निर्भर करता है कि बालक की प्रकृति के बारे में शिक्षकों व माता-पिताओं को कितनी जानकारी है और वह कितनी सही जानकारी है ?

बालकों की प्रकृति के विषय में मोटे रूप से तीन विचार या धारणाएं बहुत पुराने समय से प्रचलित रही हैं :—

प्रथम, रूसो उसे ऐसा ही मानता था उसमें बंदर की सी चंचलता और उच्छृंखलता होती है। उसकी असभ्य या अपरिमार्जित प्रवृत्तियों को सुधारने के लिए उससे कठोरतापूर्वक व्यवहार करना चाहिए। उसे मारा-पीटा जाना चाहिए। उसमें आदतों का निर्माण करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए, ताकि वह सही ढंग से व्यवहार व कार्य करना सीख जाए। क्योंकि, "बगैर डाट-डपट के बच्चा बिगड़ जाता है" का सिद्धांत ऐसी धारणा रखने वाले माता-पिताओं व शिक्षकों का प्रिय सिद्धांत रहा है। टैगोर की सुप्रसिद्ध कहानी 'घर लौटना' में लेखक ने अपने बचपन के दिनों में पाठशालाओं के बालकों पर निर्मम शिक्षक किस प्रकार अत्याचार किया करते थे, उसका बहुत मार्मिक चित्र खींचा है। मास्टर महाशय छडी से बच्चों को पीटते थे। जानवरों के बाड़े जैसे बंद काल-कोठरी सरीखे कक्षा के कमरों में बंद करके पढ़ाया जाता था, जिनमें पर्याप्त प्रकाश व वायु प्रवेश नहीं कर पाते थे। भारत की प्रायः सभी पुरानी पाठशालाओं में बच्चों को छड़ी से पीटना, दण्डस्वरूप उन्हें 'मुर्गा बनाना' आदि प्रचलित रहा है। बालकों के व्यक्तित्व के महत्त्व को कभी समझा नहीं जाता था। डॉ० जाकिर हुसैन ने अपनी रोचक पुस्तक 'तालीमी-खुत्बात' (निश) में स्विट्जरलैंड के एक विद्वान विलीहोफास की पुस्तक 'दि डार्क प्लेसेज ऑफ एजूकेशन' का उल्लेख, जिसमें उन्होंने 78 प्रसिद्ध

व्यक्तियो के निजी अनुभवों का संग्रह किया है कि उन पर उनकी बचपन में उनकी पाठशालाओं मे क्या बीती थी। उनके आधार पर डॉ० जाकिर हुसैन ने लिखा था, "उस पुस्तक को पढ़कर ख्याल होता है कि मदरसा (पाठशाला) किसी जालिम की इजाद (आविष्कार) है।" द्वितीय, कई शिक्षा शास्त्रियो, धर्मगुरुओं व विचारको जैसे कामनियस, पेस्तालोजी, फ्रोबेल, गांधीजी, रवीन्द्र नाथ टैगोर आदि की धारणा रही है कि बालक में देवत्व होता है, उसमें निर्दोषता, सरलता, सच्चाई, प्रेम, शांति व वे सभी आदर्श गुण व विशेषताएं होती हैं, जो ईश्वर में होती है। पेस्तालोजी नामक महान् शिक्षा शास्त्री ने अपनी पुस्तक 'हाऊ जरट्रयूड टीचेज हर चिल्ड्रन' में लिखा है, "ईश्वर ने बच्चे को आध्यात्मिक प्रवृति प्रदान की है। इसे इस प्रकार कहे कि ईश्वर ने बच्चे मे सद्विचार शक्ति का बीज बोया है। इतना ही नहीं, ईश्वर ने उसमें अपनी अन्तरात्मा की ध्वनि के अनुरूप क्षमता भी दी है।"

जर्मन शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल के शब्दो में "बच्चा प्रकृति का बच्चा है, वह मनुष्य का बच्चा है और ईश्वर का बच्चा है।" अपनी पुस्तक 'दी एजूकेशन आफ मैन' मे उसने लिखा था, "निश्चय ही मानव की प्रकृति अपने में अच्छी ही होती है।"

तृतीय, 'बालक का मस्तिष्क जन्म के समय कोरे कागज या स्लेट जैसा होता है। माता-पिता और शिक्षक जैसा प्रभाव उस पर डालना चाहे, डाल सकते है। उसे जैसा मोड़ना चाहे मोड़ सकते हैं।" प्रसिद्ध राजनीति शास्त्री जान लॉक का यही मत था।

आधुनिक शिक्षा शास्त्रियो, मनोवैज्ञानिकों और शिक्षा समाज-शास्त्रियों ने मानव बालक की प्रकृति के बारे में जो महत्वपूर्ण जानकारी दी हैं वह उपरोक्त तीनों प्रकार की धारणाओं में से किसी एक का पूर्णरूपेण समर्थन नहीं करती।

बालक की प्रकृति के बारे में आधुनिक विचार

बालक की प्रकृति के बारे मे आधुनिक विचार निम्नांकित हैं :

1. बालक जन्म के समय कोरा कागज या खाली स्लेट नहीं होता, अपितु वह अपने साथ कई जन्म-जात विशेषताओ, कुशलताओं, शक्तियों आदि को लेकर पैदा होता है।

2. बालक पर केवल मात्र उसकी वंश-परंपरा का ही प्रभाव नहीं पड़ता, उसके चारों ओर के वातावरण तथा अभिप्रेरणा का ही उस पर जबरदस्त प्रभाव पड़ता है। अतः बालक के व्यक्तित्व का विकास उसकी वंश-परंपरा, वातावरण और अभिप्रेरणा के सम्मिलित प्रभावों पर आधारित होता है।

3. डॉ० जाकिर हुसैन के अनुसार, "बच्चे को ईश्वर का अंश समझिए। न वह आपकी संपत्ति है, न वह आपका खिलौना। वह तो आपके पास ईश्वर और मनुष्यता की एक धरोहर है। उसको तो सहज प्रवृत्तियां प्रकृति ने प्रदान की है, उन्हें न बहुत उकसा कर बिगाड़िए, न बहुत दबा कर, और हां, इस बात का दूसरा पहलू भी याद रखें कि अगर बच्चा आपका खिलौना नहीं है, तो आप भी बच्चे के खिलौने नहीं। आप भी ईश्वर के अंश—जरा कुछ अधिक अनुभवी। न आप उस पर जुल्म करें, न वह आप पर। न आप उससे खेलें, न वह आपसे। दोनों में एक दूसरे पर भरोसा हो, प्रेम हो।

अन्य स्थल पर वे लिखते हैं कि बच्चे को मिट्टी का लौंदा न समझें, जिसे आप जो चाहे वैसी शक्ल दे सकते हैं। उनके ही शब्दों में, "आप किसी तरह अपने को मौलिक भ्रांतियों से मुक्त कर लें, बच्चे को मनुष्य का अग्रदूत समझें, उसे बेसहारे खुद भी बढ़ने दें, उसकी प्राकृतिक क्षमताओं और प्रवृत्तियों का सम्मान करें और समझें कि यह छोटा-सा जीव अपने विकास की क्रियात्मक पूर्ति की ओर खुद कदम उठाता है। इसे सहारा दीजिए, रास्ते से कांटे हटा दीजिए, मगर इसके चलने की दिशा तो न बदलिए।"

4. आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सभी बालक एक-सी ही प्रकृति या विशेषताओं के नहीं होते, अपितु उनमें व्यक्तिगत अंतर पाये जाते हैं। ये अंतर उनकी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक भावनात्मक, क्रियात्मक या कलात्मक शक्तियों, क्षमताओं, अभिरुचियों आदि में पाये जाते हैं। वास्तव में आधुनिक शिक्षा के उद्देश्य में भी यही उचित माना जाता है कि उससे बालकों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं का पोषण और विकास हो सके। अब प्रजातंत्रीय देशों में ऐसी शिक्षा ही उचित मानी जाती है। प्रत्येक बालक अपनी मौलिक विशेषताओं के अनुसार विकसित हो सके, ये ही ठीक माना जाता है।

5. सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एरिक एच० एरिकसन के अनुसार बालकों में जबरदस्त प्राणशक्ति या जोश पाई जाती है। इस शक्ति को कुचलना—जैसा कि प्रायः माता-पिता और शिक्षक करते हैं—एक गंभीर पाप है।

6. नर्सरी जाने वाला बालक या उस आयु का बालक शारीरिक रूप में विकासोन्मुख होता है। उसका कद लगभग 90 सेंटीमीटर और भार लगभग 12 किलोग्राम होता है। वह 2½ वर्ष या अधिक आयु का होता है। उसके दौड़ने में गति होती है। उसमे चपलता होती है। वह सीढ़ी पर स्वयं चढ़ सकता है, दोनों पांव मिलाकर कूद सकता है। दूसरे बच्चों के खेलों में रुचि लेता है, यद्यपि स्वयं दूर रहता है। वह अपना खेल अलग खेलता है। उसकी मांसपेशियों का आपसी सम्बन्ध व समन्वय पूर्ण नहीं होता, तो भी वह छोटी-छोटी क्रियाएं कर लेता है, और उसे स्वयं ऐसा करने में आनन्द आता है। रूसो का सुझाव था कि बालक को स्वयं छोटे-छोटे कार्य करने देने चाहिएं। यदि बालक अपनी माता से यह कहता है कि मुझे वह चीज उठाकर लाकर दो, तो बजाय ऐसा करने के माता को उसे उस चीज के पास ले जाना चाहिए व उसे स्वयं उठाने तथा लाने को प्रेरित करना चाहिए, जिससे कि उसे स्वयं अपना कार्य करके विजय प्राप्त करने की प्रसन्नता हो।

7. छोटे बालक अपना कार्य स्वयं करना चाहते हैं। वे स्वयं एक चम्मच से खाना चाहते हैं, स्वयं गिलास पकड़ कर दूध या पानी पीना चाहते हैं, स्वयं अपने जूते व कपड़े पहनना चाहते हैं, स्वयं अपने कपड़े उतारना चाहते हैं, किसी के आने पर जब दरवाजे पर खटका होता है या कॉल-बैल बजती है, तो स्वयं भाग कर उसे खोलना चाहते हैं, स्वयं जाकर चिट्ठी डालने की जिद करते हैं आदि। माता-पिता उनकी इस प्रकार की स्वतन्त्रता व प्रेरणा में अनावश्यक दखल ही नहीं देते, अपितु रोक लगाते हैं और कभी-कभी तो मार-पीट कर उसे कुचलना चाहते हैं, जो गलत है।

8. छोटे बालकों में संग्रह प्रवृत्ति होती है। उन्हें रंग-बिरंगी चीजों जैसे पंखों, मोतियों, पहियों, कंकड़, कंघों, कागजों, चित्रों, पिनों, खिलौनों आदि का संकलन का बहुत शौक होता है। अपनी इन चीजों को दूसरों को दिखला कर उनसे प्यार व शाबाशी के मीठे शब्द सुनकर उन्हें बहुत प्रसन्नता होती है।

9. उनमें बहुत अधिक जिज्ञासा होती है। वे खाली बर्तनों, वस्तुओं, जगहों मे ताक-झांक करते हैं, घड़ी, छोटी-बड़ी चीजों, मशीनों, आदि को उठा, उलट-पुलट कर यह देखना चाहते हैं कि उनमे क्या है? उनकी जिज्ञासा, प्रकृति के वातावरण में व्याप्त सभी प्रकार की वस्तुओं, घटनाओं, परिवर्तनों के बारे में

हो सकती है। टैगोर की कहानी 'काबुलीवाला' में छोटी लड़की मिनी की जिज्ञासा यह जानने की थी कि बादलों में क्या है, वर्षा कैसे होती है ? छोटे बच्चे घर में नया बालक पैदा होने पर जिज्ञासावश पूछते ही हैं कि यह कहां से आया है।

10. जिज्ञासा के साथ-ही-साथ बालको में अभूतपूर्व कल्पना शक्ति होती है। अंग्रेज शिक्षिका डोरोथी ई० एम० गार्डनर के शब्दों में, 'कल्पना एक महान् भेंट है और सौभाग्यवश एक पूर्णतया अकल्पनाशील बालक जैसी कोई चीज नही होती। अधिकांश बालक इससे धनी रूप से सम्पन्न होते हैं।" टैगोर की काबुली वाला' कहानी की नायिका बालिका मिनी की कल्पना थी कि आकाश मे एक बहुत बड़ा हाथी रहता है, जो अपनी सूंड़ से पानी फेंकता है, तो वर्षा होती है।

बालकों को कल्पनाशील कहानियों मे बहुत रुचि होती है। पशु-पक्षियो, अनजाने बालको, परियो आदि की कहानियां सुनने मे बड़ा आनन्द आता है। जब उन्हें पशु-पक्षियो के चित्र दिखाते हुए कोई कहानी कही जाती है या कोई बात बतलाई जाती है, तो उनकी कल्पना सजीव हो उठती है। "बाल-मन एक विशेष अवस्था तक निर्जीव एवं सजीव, मूक तथा मुखर, प्रवृत्ति प्रधान और बुद्धि और विवेक प्रधान वस्तुओ एवं प्राणियो के भेद को समझकर कल्पना एवं वास्तविकता में भेद करने मे रुचि नही रखता।"

11. झूठमूठ मे रुचि—बालकों को झूठमूठ में बहुत रुचि होती है। वे झूठमूठ की चाय, शर्बत, मिठाई बाटते है, गुड़िया की शादी करते हैं, हवाई जहाज उड़ा लेते हैं। कभी-कभी तो वे इस झूठमूठ की दुनिया मे ही जीते है। श्री जी० एन० भटनागर ने एक रोचक उदाहरण दिया है :

"एक बार एक व्यक्ति अपने किसी मित्र के घर खाना खाने गये। घर में आया मेहमान बहुधा घर के बच्चो के प्रति अपनी रुचि एवं स्नेह प्रगट करने का प्रयास करता है। इसका प्रारंभ वह उनकी आयु के अनुसार उपयुक्त प्रश्न पूछ कर करता है। उन्होने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई के बारे मे बात प्रारम्भ की। हर एक से पूछा, "तुम किस कक्षा मे पढते हो ?" किसी ने 10वी, किसी ने 7वी और किसी ने 4थी कक्षा बताई। सहज ही वे सबसे छोटे बालक $4\frac{1}{2}$ वर्ष की ओर मुड़े और पूछा, "मुन्ना, तुम किस कक्षा में पढ़ते हो ?"

अनायास ही उत्तर मिला, "5वी कक्षा में।" वे एक क्षण चौंके, लेकिन बाल-मन का आनंद लेने के विचार से कहा, "बहुत अच्छा!" अगला प्रश्न था, "तुम्हारा स्कूल कौन-सा है?" तत्काल ही उत्तर मिला, "झूठमूठ का स्कूल।" बालक के झूठमूठ का स्कूल भी एक वास्तविकता थी, जिसमे रहकर वह अपनी कई इच्छाओं की कल्पना में पूर्ति कर मानसिक संतोष प्राप्त करता था।

12. अपने बड़ों से होड़ : बालक अपनी शारीरिक कमजोरी व असमर्थताओं को स्वीकार करना नहीं चाहता। इसके लिये वह अपने बड़ों का अनुसरण करता है। इस अनुसरण के साथ-साथ ही होड़ चलती रहती है। बालक यह होड़ अपने भाई-बहिनों व निकटतम बड़ों के साथ करता है।

13. बालकों मे चंचलता, चपलता तथा क्रियाशीलता होती है। वे दो-तीन मिनट भी शांति से बैठ नही सकते। कुछ न-कुछ उल्टा-सीधा करते ही रहते हैं। किसी-न-किसी कार्य मे व्यस्त रहना, उन्हें अच्छा लगता है। उनकी यह चंचलता व क्रियाशीलता निरुद्देश्य नहीं होती। वे किसी उद्देश्य से ही ऐसा करते हैं। उनमें तोड़-फोड़ की प्रवृत्ति इसलिए होती है कि वे जानना चाहते हैं कि इस चीज में क्या है, वे नई बात या नई चीज की तलाश में रहते हैं। बड़ों के लिए जो चीज पुरानी या जानी-पहचानी हो सकती है। बाल-मन के लिए तो वह नई ही होती है। यही उसकी सृजनशीलता होती है। यही मौलिकता का प्रथम बीजारोपण है।

14. खेल बालकों को बहुत प्यारा होता है। अपनी जागृत अवस्था का अधिकांश समय वे इसी मे बिताते हैं। इनके द्वारा वे अपने मन की कई अपूर्ण इच्छाओं की पूर्ति कर लेते हैं और अपने मन की कई कुंठाए हल कर लेते हैं। खेल के सहारे उनकी कई वृत्तियों को नई दिशा व नया रूप मिलता है। इसी-लिए आधुनिक मनोवैज्ञानिक बालक के व्यवहार को सही दिशा में लाने के लिए खेल उपचार का प्रयोग करते हैं।

15. बालक की बुनियादी आवश्यकताओं में सुरक्षा, स्नेह, प्यार व उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति प्रमुख हैं। जो कोई व्यक्ति भी उन्हे उसे प्रदान करता है, बालक का उसकी ओर सहज आकर्षण हो जाता है। उसकी बात को ध्यान से सुनना, समझना व उसके अनुकूल आचरण करना वह चाहता है। ऐसा व्यक्ति ही उसके आचरण को सही दिशा दे सकता है।

16. शिकागो विश्वविद्यालय के शिक्षाशास्त्र के प्राध्यापक बेंजामिन ब्लूम ने अपनी पुस्तक 'स्टेबिलिटी एण्ड चेंज इन ह्यूमन करैक्टर' में 1000 बालकों के ऊपर किये गए अपने शोध अध्ययन के द्वारा बतलाया है कि चार वर्ष की आयु तक बच्चा अपनी संपूर्ण-बुद्धि-संभाव्य का विकास कर चुका होता है। प्रथम चार वर्षों में ही बुद्धि संभाव्य का इतना विकास हो चुका होता है, जितना कि आगामी 13 वर्षों में होने को है, 6 वर्ष की आयु तक पहुंचने पर वह लगभग 17 वर्ष तक प्राप्त की सकने वाली बुद्धि का दो-तिहाई भाग प्राप्त कर चुका होता है। 4 से 17 वर्ष की आयु सीमान्तर्गत बुद्धि-विकास चार वर्ष तक विकसित हुई बुद्धि पर आधारित होता है। 4 से 6 वर्ष की अवधि में बुद्धि-परिवर्तन संभव है पर अत्यन्त कठिन, और ज्यों-ज्यों आयु बढ़ती है, यह परिवर्तन प्राय: असंभव हो जाता है।

17. सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जीन प्याजे ने बालक के मानसिक विकास के निम्नांकित प्रमुख चरण बतलाये हैं :

(क) संवेदनात्मक काल (जन्म से 2 वर्ष)

इसमें बालक अपनी मांसपेशियों पर नियंत्रण करता है और एक प्रकार की चीजों को दूसरे प्रकार की चीजों से अलग करने में असमर्थ होता है।

(ख) प्रीऑपरेटिव काल (2 से 7 वर्ष)

इसमें बालक अपनी सूझबूझ से तर्क कर सकता है, तर्क संगत ढंग से सोच-कर नहीं। वह वस्तुओं के नाम बतला सकता है, लेकिन वस्तुओं के वर्गों के नहीं।

(ग) कंसर्ट ऑपरेशनल स्थिति (7 से 11 वर्ष)

इसमें बालक वस्तुओं, वर्गों और सम्बन्धों को तो तर्कपूर्ण ढंग से बतला सकता है, लेकिन मौलिक रूप से सम्प्रत्ययों को नहीं बता सकता।

(घ) फॉर्मल ऑपरेशनल काल (11 से 15 वर्ष)

इसमें बालक सम्प्रत्ययों की परिभाषा कर सकता है और तार्किक, व्यवस्थित और सांकेतिक ढंग से तर्क कर सकता है।

इनके आधार पर प्याजे का कहना है, "बालक उपयुक्त प्रकार के वातावरण से बहुत अधिक लाभान्वित हो सकता है, जिसमें वह स्वच्छंदता और निरन्तरता से उपयुक्त प्रकार की समाज सामग्री के साथ कार्य कर सके। ऐसी सामग्री इस प्रकार की होनी चाहिए जो वर्गीकरण, क्रमीकरण, गिनना,

ज्योमिती या स्थल संबंधी करने की अनुमति दे, अर्थात् जो बालक के तार्किक-गणितीय क्रियाओं के निर्माण में, जो 7 या 8 वर्ष की आयु पर आरम्भ होते हैं, सहायता दे।

18. "बच्चे अनुकरण इमिटेशन, अंतरीकरण इंटिमेटाइजेशन व पहचान आइडेन्टिटी के माध्यम से सीखते हैं। उनके सामने जैसे नमूने प्रस्तुत किये जाते हैं, वैसे ही वे सीख जाते हैं।

19. "बालकों का सीखना वास्तविकता के संदर्भ में होता है। गूढ़ प्रकृति के सिद्धांतों को समझना उनके लिए कठिन होता है।

20. "सामूहिक क्रियाओं में भाग लेकर सीखना बालकों के लिए बहुत सुलभ और उपयोगी होता है।

21. "इस बीसवीं शताब्दी में बालक जनसंचार के साधनों—रेडियो, टेलीविजन, फिल्म, पत्र-पत्रिकाओं, कार्टून व कॉमिक-बुक्स से तथा शहरीकरण, औद्योगीकरण व विज्ञान व तकनीकी की प्रगति से बहुत अधिक प्रभावित होते हैं। अतः उनकी सामाजिक चेतना व संवेदनशीलता बहुत विकसित स्तर की पाई जाती है। कथाओं में बच्चे जो कुछ वे कर रहे होते हैं बहुत रुचि लेते हैं, और सीखने और खोजने के उनके प्रयास में उनकी खुशी उनकी आंखों में चमक पैदा कर देती है और उनके पूरे शरीर सावधान हो जाते हैं।

22. "बालकों में आत्मसम्मान का भाव होता है। वे भी अपनी प्रशंसा व सम्मान पाकर अधिक अच्छा व्यवहार व कार्य करते हैं, परन्तु फटकार या झिड़कार से उनके आत्मसम्मान तथा आत्मगौरव को ठेस लगती है और उनकी शक्तियों व अच्छाइयों का दमन होता है।

23. "बालक बहुत अधिक सुझावशील होते हैं। उन पर बड़ों के सुझावों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। मजाक या भोले रूप में भी कही गई किसी भी बात, सुझाव या संकेत को वे सही मान लेते हैं और उनको अपनाने का प्रयास करते हैं।"

उपर्युक्त सभी विशेषताओं को ध्यान में रखने पर ही बालकों की सही प्रकृति को समझा जा सकता है। शिक्षकों व माता-पिताओं के लिये यह आवश्यक है कि वे बालकों को बेजान मिट्टी का लौंदा न समझें, अपितु उन्हें इन सभी विशेषताओं से युक्त शक्तिशाली सभावनाओं से भरपूर विकासशील प्राणी समझें और उपर्युक्त व्यवहार व शिक्षण की व्यवस्था करें।

अध्याय-8

बाल शिक्षा : मूलभूत विचारबिन्दु

बालशिक्षा पूर्व प्राथमिक शिक्षा का महत्व बहुत प्राचीन काल मे समझा जा रहा है, यद्यपि इस क्षेत्र में ठोस कार्य पिछली दो-तीन शताब्दियों से ही होना आरम्भ हुआ है ।

ग्रीक दार्शनिक सुकरात ने बार-बार कहा था, "मेरे साथी नागरिकों ! तुम धन एकत्र करने में तो अपना हर संभव प्रयास करते हो, परन्तु अपने बच्चों की इतनी कम देखभाल करते हो, जिनको एक दिन तुम्हें अपना सब धनमाल देकर दुनिया छोड़कर जाना ही होगा ।" सुकरात के ये शब्द बालशिक्षा के महत्व को प्रगट करते हैं ।

दार्शनिक प्लेटो (427 ई० पू०—348 ई० पू०) द्वारा दी गई शिक्षा योजना में पूर्वप्राथमिक शिक्षा (3 से 6 वर्ष तक) का सर्वप्रथम व सर्वाधिक महत्व था । इसमें वह बालक के शारीरिक-विकास, नैतिक-गुणों, कल्पनाशक्ति, देशप्रेम तथा संगीत के विकास पर बल देता था । प्लेटो के ही शब्दों मे, "व्यायाम और संगीत प्रारंभिक अवस्था से ही आरंभ होने चाहिएं और इनकी शिक्षा बड़ी सावधानी से जीवनभर चलती रहनी चाहिए ।

शिक्षा शास्त्री कोमेनियस (1592—1670) ने जन्म से लेकर 6 वर्ष की आयु की अवधि को बहुत महत्वपूर्ण माना था, जबकि "सभी कलाओं और विद्वानों की जड़ें" आरंभ होती हैं । इस आयु के बालकों के लिए उसने बाल-शाला स्थापित करने पर जोर दिया था । कोमेनियस सामूहिक पाठशाला का समर्थक था । वह बच्चों की अनुकरण प्रवृत्ति को शिक्षा के महत्वपूर्ण स्थान दिये जाने पर बल देता था । उसके अनुसार बालशाला सुन्दर स्थान पर व सजी हुई होनी चाहिए तथा उसके निकट बालकों के खेलने व टहलने के लिए मैदान और सुन्दर बाग होना चाहिएं । उसके अनुसार प्रारंभ में प्रत्येक वस्तु उन्हें (बालकों को), भाषा के माध्यम से नहीं अपितु इन्द्रियानुभव के आधार



शिक्षा शास्त्री कोमेनियस (1592-1670)



रूसो (1712-1778)



सुप्रसिद्ध जर्मन शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल



शिक्षा शास्त्री मेरिया मोंटेसरी (1870-1952)

पर बताई जानी चाहिए। हर वस्तु जानने और उसके संबंध में स्वयं जांच-पड़ताल करने की प्रवृत्ति उनमें पैदा कर देनी चाहिए। उसने उस समय की पाठशालाओं को, "बच्चों के लिए आतंक और उनके मस्तिष्क के लिए कसाई-खाने के समान" बतलाया था और वह चाहता था पाठशालाएं प्रसन्नता के स्थल हों व सभी को उनमें भेजा जाना चाहिए। एक फ्रेंच प्रोटेस्टेंट पादरी जोहान फ्रेड्रिक ओवरलिन (1740-1826) ने विश्व में सर्वप्रथम नर्सरी अलसेस नामक स्थान पर फ्रांस में आरंभ की थी और इस प्रकार वह नर्सरी आंदोलन का संस्थापक माना जाता है। उसकी नौकरानी व सहायिका लुई शेपला ने छः वर्ष से कम आयु के बालकों को एकत्र करके उन्हें खेल व आनंद पर आधारित शिक्षा दी।

रूसो (1712—1778) नामक स्विट्जरलैंड के सुप्रसिद्ध विचारक ने अपनी 'इमिले' में इस बात पर बल दिया था, "बच्चों को मनुष्य बनने से पूर्व बच्चे होना चाहिए।" उसका विचार था कि बालक को कोई आदत नहीं पड़ने देनी चाहिए, शिक्षण से पूर्व अनुभव होना चाहिए। उसके शब्दों में, "यदि बालक किसी वस्तु को लेने की इच्छा प्रकट करता है, तो वह उसे मिलनी चाहिए, लेकिन उत्तम यह होगा कि वस्तु को उसके पास न ले जाकर उसे स्वयं वस्तु के पास ले जाया जाए।" इस प्रकार रूसो चाहता था कि शिशु के शारीरिक विकास द्वारा उसकी भावनाओं और प्राकृतिक प्रवृत्तियों की प्रकृति में स्वच्छंद अभिव्यक्ति हो।

यद्यपि रूसो के ये विचार महत्वपूर्ण हैं, तथापि उसे बालशिक्षा का महत्वपूर्ण विचारक नहीं माना, क्योंकि उसकी प्रकृतिवाद का शैक्षिक दर्शन अनुपयुक्त माना गया है।

सुप्रसिद्ध जर्मन शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल

सुप्रसिद्ध जर्मन शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल को महत्वपूर्ण अग्रणी माना जाता है। किन्डरगार्टन शिक्षा व्यवस्था का वही प्रणेता था। उसने 1837 में ब्लैंकेन्बर्ग नामक स्थान पर पहला शिशु उद्यान खोला था तथा पचास वर्षों तक वह बाल-शिक्षा के प्रसार में उल्लेखनीय कार्य करता रहा। उसकी पुस्तकों 'एजूकेशन ऑफ मैन', 'मदर एण्ड प्ले-सोंज', 'एजूकेशन बाई डवलपमैंट', 'पेडागोगिक्स ऑफ दी किन्डरगार्टन' में उसने अपने शिक्षा सम्बन्धी विचारों को प्रस्तुत किया है।

उसके प्रमुख शैक्षणिक विचार बिन्दु निम्नांकित हैं :

1. शिक्षा का उद्देश्य—बालक के व्यक्तित्व का स्वतन्त्र विकास इस प्रकार करना है कि उसे अपने मे छिपी नैसर्गिक शक्ति का बोध हो जाये।
2. बालक की शिक्षा उसकी शक्तियों को ध्यान में रख कर दी जानी चाहिए, प्रौढ़ मनुष्य के निर्माण के रूप में नहीं।
3. बालक की चंचल प्रवृत्ति उसकी रचनात्मकता की सूचक है।
4. आत्मक्रिया बालक की रुचियों और प्रवृत्तियों को संचालित करती है।
5. खेल बालक की विशेष क्रिया है जो उसे आनंद, संतोष, आंतरिक व बाह्य सुख और विश्व के साथ शांति का अनुभव प्रदान करता है।
6. बालक की शिक्षा में उसे स्वतंत्रता दी जानी चाहिए, क्योंकि उसके व्यक्तित्व, आत्मक्रिया, खेल, रुचियों व आंतरिक शक्तियों का विकास स्वतंत्रता में ही हो सकता है।
7. शिक्षा द्वारा बालक के सामाजिक जीवन में भाग लेने व सहयोग को बढ़ावा मिलना चाहिए। घर, परिवार, समाज और पाठशाला का आपसी संबंध घनिष्ठ होना चाहिए। सामूहिक खेलकूद, संगीत व अन्य सामूहिक क्रियाओं द्वारा बालकों में सामाजिक भावना विकसित की जानी चाहिए।
8. शैशवावस्था में वस्तुओं की तोड़-फोड़, निरीक्षण और परीक्षण द्वारा बालक उनमें छिपे सत्य को पाना चाहता है।
9. खेल और कला बाल शिक्षा के अत्यन्त अनिवार्य तत्व हैं।
10. बालक को अपनी अभिव्यक्ति करने और इस प्रकार अपना विकास करने मे सहायता देना ही किन्डरगार्टन शिक्षा का मूलभूत विचारबिन्दु है। प्राकृतिक सौंदर्य का अवलोकन करने देना चाहिए।

फ्रोबेल ने अपनी शिशु-शालाओं के पाठ्यक्रम में, जिन्हें बाल उद्यान कहता था, खेल और संगीत, बागबानी और पशु-पक्षियों का पालन, भांति-भांति के शैक्षिक खिलौने, जिन्हें भेंट नाम दिया गया है, तथा व्यापारों या कार्यों, जैसे मिट्टी, कागज, लकड़ी, चटाई आदि के डिजाइन, खेल, खिलौने, वस्तुएं आदि बनाना तथा स्वशासन पर बहुत बल दिया। अपनी मृत्यु शैय्या से विश्व के नाम दिये गये अपने संदेश मे फ्रोबेल ने कहा था, "आओ, हम अपने बच्चो के लिए जीएं।"

एक अमेरिकन लेखक मारविन लेपरसन ने फ्रोबेल के विचारों व क्रिया-कलापों का मूल्यांकन करते हुए यह पूर्णतया ठीक ही लिखा है कि "उसकी किन्डरगार्टन शिक्षण पद्धति की सबसे महान् नूतन देन खेल थी, जिससे बालक की अविरल शक्तियों सुव्यवस्थित व्यवहार में मार्गीकृत हो जाती थी और फ्रोबेल की सामग्री के उपयोग से उसे साथी वर्ग व प्रौढ़ जीवन की आवश्यकताओं से सामंजस्य करा दिया जाता था...किन्डरगार्टन ने शिक्षण मे वात्सल्य और शारीरिक क्रिया की सार्थकता को स्थापित किया। उसने इस बात पर ध्यान केन्द्रित किया कि किस प्रकार बालक पढ़ते हैं और कक्षा के कमरों में प्रसन्नता को कानूनी औचित्य प्रदान किया।"

फ्रोबेल के बालशिक्षा संबंधी महत्वपूर्ण विचार तथा किन्डरगार्टन पद्धति का विश्व भर में बहुत प्रचार हुआ है।

11. इंग्लैण्ड के औद्योगिक व प्रसिद्ध समाजसुधारक रोबर्ट ओवन 1771-1858) ने इंग्लैण्ड मे सर्वप्रथम शिशुशाला खोली जो 'स्वतन्त्रता, स्वच्छ वायु और खेल' पर आधारित थी। उसकी पाठशाला में बालकों को कहा जाता था, "हर एक को प्रसन्न बनाओ। परस्पर सहायता करो। छोटे बच्चों की मदद व देखभाल करो।" उसका विचार था, "बच्चे पुस्तकों से तंग किये जाने के लिये नही होते। उन्हें आस-पास की वस्तुओ के उपयोग व गुणों को सिखाया जाना चाहिए तथा परस्पर प्रसन्न रखा जाना चाहिए।"

इंग्लैण्ड में दो प्रसिद्ध बहनों मार्गरेट मैकमिलन और रेचेल मैकमिलन ने नर्सरी शिक्षा के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया। उन्होंने खुली हवा के नर्सरी स्कूलों के आंदोलन को आरंभ किया तथा लंदन की गंदी बस्तियों में नर्सरी शालाएं खोलीं। उनके प्रयास से 1918 मे इंग्लैण्ड मे फिशर एक्ट के अंतर्गत 2 से 5 वर्ष की आयु के बालकों के लिय नर्सरी मे जाना आवश्यक किया गया। वे अपनी नर्सरी में बालकों की सफाई तथा उपयुक्त भोजन पर बहुत जोर देती थीं। अपनी पुस्तक 'नर्सरी स्कूल' मे मार्गरेट मैकमिलन ने लिखा है, "नर्सरियों और नर्सरी स्कूलों की जरूरत इसलिए है, क्योंकि छोटे बालकों को नर्सों की जरूरत होती है।" मार्गरेट मैकमिलन का पारिवारिक प्रेरणवाक्य (मोटो) तथा विश्व के नाम संदेश था, "मैं असहायों की सहायता करना सीखती हूं।"

अपनी शिशुशालाओं के शिक्षकों से तथा अपनी वार्ताओं में मार्गरेट मैकमिलन कुछ विचारबिन्दुओं को बार-बार व्यक्त किया करती थीं :

1. "हर बालक को ऐसे शिक्षित करो जैसे कि वह आपका ही बालक हो।"
2. "पोषण करो, विकसित करो, पालन करो, शिक्षित करो।" वे प्रशिक्षित करो शब्द का प्रयोग करना पसन्द नहीं करती थीं।
3. "जाओ और मशाल को सदैव ऊंची रखो।"

उनकी शाला की एक शिक्षिका जोन पीअर्स ने अपने संस्मरण में लिखा है कि गंभीर रहने वाली, सीधे-सादे काले अनाकर्षं वस्त्र पहनने वाली कुमारी मार्गरेट मैकमिलन की आवाज सुन्दर और प्रभावपूर्ण थी, उनकी वाणी में जबरदस्त प्रेरणा शक्ति थी, जब वे नर्सरी शाला देखने आती तो शिक्षिकाएं कांप उठती थीं (क्योंकि वे कठोर अनुशासन प्रिय थीं) परन्तु छोटे-छोटे बालक प्रसन्नता से झूम उठते थे। उनके त्यागपूर्ण संघर्ष और निर्धनों के बालकों के प्रति अथाह प्रेम ने बालशिक्षा के क्षेत्र में उनका उल्लेखनीय स्थान बनाया है।

विश्वविख्यात इटेलियन शिक्षा शास्त्री मेरिया मोंटेसरी (1870—1952) के बाल शिक्षा संबंधी विचार व उनकी मोंटेसरी शिक्षा पद्धति विश्वभर में लोकप्रिय हुई है। वे इटली की प्रथम महिला थीं, जिन्होंने चिकित्सा विज्ञान में एम० डी० (डॉक्टर इन मेडिसिन) की डिग्री प्राप्त की थी। उन्होंने मंदबुद्धि बालकों के अपने अध्ययन व चिकित्सा-काल में उनकी समस्याओं को समझा और उसके आधार पर उन्होंने बाल-शिक्षा के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण विचारबिन्दु विकसित व प्रसारित किए। उनके प्रमुख विचार निम्नांकित थे :

1. *स्वतंत्र विकास का सिद्धांत* : "प्रत्येक बालक जीवन शक्ति की अनुपम अभिव्यक्ति है। उसका शरीर बढ़ता है और उसकी आत्मा विकसित होती है। इन शारीरिक या मानसिक दोनों रूपों का एक ही मूल स्रोत है और वह है 'जीवन'। हम न तो विनाश करें और न अबोध ही रहें, वरन् उनकी समस्त अभिव्यंजनाओं की प्रतीक्षा करें, जिनके एक दूसरे के बाद प्रगट होने पर हमको पूर्ण विश्वास है...हमें चाहिए कि बालक के व्यक्तित्व के इन प्राथमिक चिन्हों का श्रद्धापूर्वक आदर करें।"

2. *व्यक्तित्व का विकास* : बालकों की रुचियों व आवश्यकताओं में भिन्नताएं होती हैं, अतः उनसे पूर्णतया विकसित होने के अवसर प्रदान करने पर ही उनके व्यक्तित्व का सुचारु रूप से विकास हो सकता है।

3. स्वयं शिक्षा का सिद्धांत : बालकों से स्वयं अपनी मति, इच्छा व समय की सुविधा के अनुसार लिखने की सुविधा होनी चाहिए। उनकी समस्त शिक्षा उनके प्रयत्नों द्वारा ही होनी चाहिए।

4. मांस पेशियों का प्रशिक्षण : शरीर की माम पेशियों का शरीर की अन्य क्रियाओं के साथ संबंध होता है, अतः छोटी आयु में ही बालकों की मांसपेशियों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, ताकि वे अन्य क्रियाओं को सुगमतापूर्वक कर सकें।

5. ज्ञानेंद्रियों का प्रशिक्षण : ज्ञानेंद्रियों के अनुभव के द्वारा ही हमारे मस्तिष्क का बाह्य संसार से सम्बंध स्थापित होता है, अतः उनको प्रशिक्षित करना अत्यंत आवश्यक है। इसीलिए मोंटेसरी शिक्षण पद्धति में दृष्टि, श्रवण, स्पर्श, गंध एवं स्वाद से संबंधित संवेदनाएं उत्पन्न करने में शिक्षण यंत्रों को सहायक बनाया गया है।

6. भाषा की शिक्षा : भाषा के द्वारा ही विचारों का आदान-प्रदान होता है, अतः भाषा की शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। वस्तु और उसके नाम के माध्यम से संबंध समझाने के नाम के द्वारा वस्तु की पहचान करवाने और वस्तु के द्वारा नाम का स्मरण करवाने पर बहुत जोर दिया जाता है। मोंटेसरी के अनुसार बालक को लिखना पहले सिखाया जाये और बाद में पढ़ना सिखाया जाये। लिखने की शिक्षा में बालकों को पहले रेखाएं खींचना और फिर लकड़ी, गत्ते या प्लास्टिक के बने अक्षरों पर उंगली फेरने को कहा जाता है। अनुकरण विधि द्वारा लिखने तथा रंग भरने की क्रिया कराई जाती है।

7. शैक्षिक वातावरण का निर्माण : मोंटेसरी के अनुसार अध्यापिकाओं को निर्देशिका के रूप में कार्य करना चाहिए। उनका कार्य बालकों के विकास व शिक्षा के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना है। किसी भी नये ज्ञान को देने से पहले उसे ऐसी स्थिति उत्पन्न करनी चाहिए जो बालक के 'मनोवैज्ञानिक क्षण' को उभारने में सहायक होती हो और फिर पर्याप्त ज्ञान देना चाहिए। "मोंटेसरी—विद्यालय का सम्पूर्ण वातावरण इस प्रकार सुव्यवस्थित रहता है कि बच्चों की क्रियाशीलता अत्यन्त सरलतापूर्वक सुनिर्धारित एवं उपयोगी कार्यों की ओर उन्मुख हो जाती है, जो स्वतः सफल अनुशासन की सृष्टि करती है।"

मेरिया मोंटेसरी का विश्व भर मे प्रभाव फैला। वे भारत में आई थीं व गांधीजी से भी मिली थीं। भारत की थियोसोफिकल सोसाइटी के अध्यक्ष डॉ० जी० एस० अरुण्डेल के निमंत्रण पर उन्होंने भारत में आकर अड्यार (मद्रास) में 1939 में मोंटेसरी शिक्षा के शिक्षकों का पहला कोर्स दिया था और फिर वे भारत के कई भागों में ऐसे ही कोर्स देने गई थीं। उनके पुत्र ने उनके कार्य को भारत में लगातार जारी रखा है और अब कलकत्ता में उनके द्वारा स्थापित मोंटेसरी शिक्षण का एक महत्वपूर्ण केन्द्र है। वैसे लंदन में मोंटेसरी इंटरनेशनल नामक एक बहुत बड़ा अंतर्राष्ट्रीय शिक्षण संगठन है, जो मोंटेसरी के विचारों व पद्धतियों का प्रसार व प्रशिक्षण कार्य करता है।

आरनोल्ड गेसेल (1820-1961) : इस सुप्रसिद्ध अमेरिकन मनोवैज्ञानिक के अनुसार बालक के आरंभिक वर्षों में उसके मस्तिष्क व कृतित्व का महत्व-पूर्ण ढंग से विकास होता है, अतः यदि इस समय उसे किसी प्रकार का कुसामंजस्य का शिकार होना पड़े तो, उसमें मानसिक अव्यवस्थाएं पनप सकती हैं, जो बाद में गंभीर रूप धारण कर सकती हैं। पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में उसकी देन बहुत महत्वपूर्ण मानी जाती है।

भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा

1. 1885 में कुछ ईसाई मिशनरी संगठनों ने कुछ पूर्व-प्राथमिक शालाएं व लखनऊ व पूना में किंडरगार्डन प्राथमिक संस्थाएं खोली थीं।

2. 1920 और 1930 के बीच कई नर्सरी थियोसोफिस्टों व अन्य निजी संस्थाओं द्वारा भारत में। विशेषकर दक्षिणी भारत में, खोली गई थीं।

3. 1926 के आसपास भावनगर (गुजरात) में गीजूभाई भाटेका ने नर्सरी शिक्षा में बहुत रुचि ली। उनको मोंटेसरी पद्धति से ही प्रेरणा मिली थी।

4. ताराबाई मोदक ने बाल-शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया। उन्होंने ग्राम बाल शिक्षण केन्द्र कोसाबाद (थाना जिला, महाराष्ट्र) में ग्रामीण, जनजातीय और हरिजन बालकों की शिक्षा के लिए खोला।

5. श्रीमती रुक्मणी देवी और डॉ० जी० एस० अरुण्डेल ने बनारस मे मोंटेसरी शिक्षण विधि मे बहुत रुचि ली। बाद में श्री अरुण्डेल ऐनी बेसेंट के बाद थियोसोफिकल सोसाइटी, अड्यार, के सभापति बने। उन्होंने मोंटेसरी

को भारत बुलवाया और अडयार में 'कलाक्षेत्र' नामक एक संस्था बनाई गई, जिसमे मोंटेसरी शिक्षण पद्धति के लिए अध्यापकों का प्रशिक्षण व मोंटेसरी की पुस्तकों व भाषणों का प्रकाशन आरंभ हुआ ।

6. कई अन्य संस्थाओं जैसे बालकनजीबारी, देहली, ऑल-इंडिया वूमेन्स कांफ्रेंस, इंडियन कौंसिल फॉर चाइल्ड, वेलफेयर आदि ने पूर्व-शालीय शिक्षा में अपनी रुचि दिखलाई ।

7. 1944 में भारत सरकार द्वारा नियुक्त सारजेन्ट कमेटी रिपोर्ट ने पूर्व-शालीय शिक्षा (विशेषकर पिछड़े वर्गों के बालकों के लिये) की आवश्यकता पर जोर दिया ।

8. महात्मा गांधी ने देश को बुनियादी शिक्षा योजना प्रदान की थी । यह मूलत: 7 से 14 वर्ष के बालकों के लिए ही थी । लेकिन 1945 में उन्होंने जब समग्र-जीवन शिक्षा योजना प्रस्तुत की, तो उसमें पूर्व बुनियादी शिक्षा के चरण को भी रखा गया और इसे बहुत महत्वपूर्ण बताते हुए गांधीजी ने कहा था, "यह मनुष्य की सारी शिक्षा की नीव है, इसी के द्वारा बालक के चरित्र के स्थायी संस्कार बढ़ते हैं ।" उनका मत था, "पूर्व बुनियादी शिक्षा राज्य का कर्त्तव्य नहीं है ।" गांधीजी के सहयोगी विनोबा भावे के अनुसार, "एक आदर्श समाज में पूर्व-बुनियादी शिक्षा का भार मां-बाप पर होगा और प्रत्येक घर एक आदर्श पूर्व-बुनियादी शाला होगी, क्योंकि पूर्व-बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य मुख्यतया बालक में उत्तम संस्कार व उत्तम आदतों की नीव डालना है । परन्तु आज के समाज की यह स्थिति नही है और न हमारे मां-बाप इतने शिक्षित और उत्तरदायी हैं । आज के घरों का वातावरण भी इतना आदर्श व सुसंस्कृत नहीं है । अत: अच्छा वातावरण प्रदान करने के लिए पूर्व बुनियादी शालाओं की आवश्यकता है, जिससे अनुकरण व अच्छे वातावरण द्वारा बालक अपना शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक विकास कर सके और अच्छे चरित्र की आधार-शिला रख सके । बालकों पर वातावरण का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है और वे बहुत कुछ अनुकरण द्वारा सीखते हैं ।"

महात्मा गांधी के अनुसार बालक की शिक्षा जन्म से भी पहले माता के गर्भ से शुरू हो जाती है । अत: उन्होंने पूर्व बुनियादी शिक्षा के चार कारण बतलाये थे ।

(1) गर्भाधान से जन्म तक : प्रौढ़-शिक्षा के अतर्गत आने वाले इस शिक्षा में ग्रामसेविका, दाई या शिक्षिका को गर्भवती माता को स्वस्थ जीवन, स्वच्छ आहार व वायु, विश्राम व प्रसन्न रहने का महत्व बताना चाहिए।

(2) जन्म से $2\frac{1}{2}$ वर्ष तक : इस अवस्था में घर में ही रहने वाले बालक के पोषण, स्वास्थ्य, कपड़ो, आदतों आदि के बारे में माता-पिता को शिक्षित किया जाना चाहिए, ताकि वे अपने बालक को अपनी सफाई करना, मल-मूत्र त्यागना, चलना, खाना, व्यवहार करना आदि घर मे प्रेम व आत्मीयता के वातावरण में सिखा सकें।

(3) $2\frac{1}{2}$ से 4 वर्ष तक : इस काल में बालक शिशु-शाला में प्रवेश करेगा। इसमें उसकी इंद्रियों, शरीर की मांसपेशियों, रचनात्मकता व विभिन्न क्षमताओं का विकास होता रहा होता है, अतः खेल व व्यायाम की ओर विशेष ध्यान दिया जाये।

(4) 4 से 7 वर्ष बालकों के इंद्रिय प्रशिक्षण के लिये विविध सस्ते देशी सामान जैसे कागज चिकनी मिट्टी, रूई, कंकड़, पेड़, पत्ते, फूल, आरी, अटेरन, फावड़ा आदि का उपयोग किया जाये। उन्हे अपना कार्य स्वयं करने की आदतें सिखाई जाएं। सामूहिक प्रार्थना, सामूहिक गीतों, नृत्यों, खेल-कूदों आदि के द्वारा उनमें उत्तम सामाजिक व मानवीय गुण विकसित किए जाएं।

पूर्व बुनियादी शिक्षा के पाठ्यक्रम मे निम्नांकित प्रकार के क्रियाकलापों को रखा जाता था :

(1) सफाई—शरीर, कपड़ों और शाला की सफाई।
(2) रचनात्मक क्रियाएं :
  (क) बर्तन व खिलौने तैयार करना तथा रंग का काम।
  (ख) कताई
  (ग) बागवानी
(3) सांस्कृतिक क्रियाएं :
  (क) संगीत
  (ख) चित्रकला
(4) सामाजिक क्रियाएं : मेले, त्यौहार, नाटक, मिलन समारोह आदि।

समवाय शिक्षण : उपरोक्त क्रिया को माध्यम बना कर बौद्धिक विकास हेतु भाषा, गणित, सामाजिक ज्ञान, सामान्य विज्ञान व पर्यावरण का ज्ञान दिया जाने का प्रावधान रखा गया था।

गांधीजी के अनुसार पूर्व प्राथमिक शाला की शिक्षिका में मां जैसा प्रेम, स्नेह, नम्रता, राष्ट्रीयता की भावना, सामाजिक कार्य में अभिरुचि, कठोर श्रम करने की आदत, उत्तम चरित्र, कल्पना व सृजनात्मकता होनी चाहिए।

गांधीजी के उपरोक्त विचारों के आधार पर वर्धा, बिहार, राजस्थान, बंगाल, गुजरात आदि राज्यों में कुछ पूर्व बुनियादी शालाएं खुली थी, और उन्होंने उत्तम कार्य किया था, लेकिन संरक्षकों के अंग्रेजी शिक्षा के मोह के कारण अधिकतर शहरों व कस्बों में ऐसी शालाएं नही खुल पाईं, जबकि अंग्रेजी माध्यम की तथाकथित 'पब्लिक नर्सरी स्कूल' स्थान-स्थान पर खुलती गईं।

9. 1947 में देश स्वतंत्र होने पर विभाजन के कारण लाखो शरणार्थी भारत आये थे। कुरुक्षेत्र में बहुत से शरणार्थियों के कैम्प लगाये गये थे। उनके बालकों की शिक्षा के लिए आपातकालीन पूर्व शालाएं खोली गईं।

10. 1951 में प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में बालवाडियों का संगठन किया गया, जो गांधीजी द्वारा सुझाई गई पूर्व प्राथमिक शालाओं के नमूने पर थीं।

11. 1953 केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना हुई, जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक बालवाड़ियों को खुलने में योगदान दिया।

12. द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) ने बुनियादी शिक्षा के प्रयासों को तेज करने पर जोर दिया। 1960 में भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने एक बाल देख-रेख कमेटी का गठन किया, जिसने देश में पूर्व प्राथमिक शाला के विकास में सहायता दी।

13. तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66) मे पूर्व प्राथमिक शिक्षा की सुविधाओं के प्रसार पर बल दिया गया तथा मौजूदा बालवाड़ियों को सुधारने, नई बालवाड़ियों के खोलने तथा बाल-सेविकाओ के प्रशिक्षण कार्यक्रमो पर बल दिया गया।

14. भारत सरकार द्वारा प्रो० डी० एस० कोठारी के नेतृत्व में गठित शिक्षा आयोग (1964-66) ने 1966 मे अपने प्रतिवेदन में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्यो को स्पष्ट किया और बालकों, विशेषकर शहरी गंदी बस्तियों और निर्धन परिवारों के वातावरण से आने वाले बालकों के लिए, पूर्व प्राथमिक शिक्षा को फैलाने पर जोर दिया। इस महत्वपूर्ण आयोग के अनुसार स्वतंत्र भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार होने चाहिएं।

(1) बालक में स्वस्थ आदतें तथा व्यक्ति सामंजस्य स्थापन के लिए आवश्यक कुशलताएं, जैसे वस्त्र पहनना, मल-मूत्र विसर्जन की आदतें, खाने, धोने व सफाई करने की आदतें आदि विकसित करना।

(2) बालक में उचित सामाजिक दृष्टिकोण और गुण विकसित करना, उनमें पूर्ण रूप से सामूहिक क्रियाओं में भाग लेने व दूसरों के अधिकारों के प्रति संवेदनशीलता विकसित करना।

(3) बालक को अभिव्यक्ति करने, समझने तथा अपनी भावनाओं और संवेगों को स्वीकार करने व नियंत्रित करने में मार्गदर्शन देकर उसका भावनात्मक विकास करना।

(4) बालक में सौंदर्यानुभूति को प्रोत्साहित करना।

(5) बालक में वातावरण व संसार के प्रति बौद्धिक जिज्ञासा को उत्तेजित करना तथा खोज, अन्वेषण और प्रयोगीकरण के द्वारा नई रुचियों को पहचानना।

(6) आत्म-अभिव्यक्ति के पर्याप्त अवसर प्रदान करके बालक में स्वाधीनता और सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करना।

(7) बालक में अपने विचारों और भावनाओं को चुस्त, सही और स्पष्ट भाषा में व्यक्त करने की योग्यता विकसित करना।

(8) बालक में उत्तम शरीर, मांसपेशियों का पर्याप्त अंत.संबंध और मूलभूत हाथ-पैरों की कुशलताएं विकसित करना।

निष्कर्ष यह है कि आयोग की सम्मति में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का सर्वांगीण उद्देश्य बालक के एकीकृत व पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना है।

इसके लिए इस आयोग ने निम्नांकित महत्वपूर्ण सुझाव दिये थे :

(1) राज्यों में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का प्रसार करने के लिए राज्य शिक्षा संस्थान में राज्य स्तरीय विकास केन्द्र खोले जाएं।

(2) जिले में स्थित पूर्व-प्राथमिक शालाओं के विकास, पर्यवेक्षण और मार्ग-दर्शन हेतु प्रत्येक जिले में पूर्व प्राथमिक शिक्षा केन्द्र खोले जाएं।

(3) निजी संस्थाओं को सरकार वित्तीय सहायता दे, जिससे वे पूर्व-प्राथमिक शालाएं खोल सकें।

(4) पूर्व-प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था हो।

(5) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी उपयुक्त साहित्य राज्य द्वारा तैयार करवाया जाए।

(6) इस क्षेत्र में शोधकार्य को प्रोत्साहित किया जाए।

(7) इस क्षेत्र में प्रयोगों को प्रोत्साहित किया जाएं। कम मूल्य के खेल-खिलौने, उपकरण, पद्धतियों को विकसित किया जाए।

(8) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का कार्यक्रम लचीला हो तथा उसमें विविध प्रकार के खेल, दस्तकारी और सीखने के कार्य तथा ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा के प्रावधान हों।

(9) राज्य और जिला स्तर पर बालकों के खेल-केन्द्र खोले जाएं।

(10) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत विभिन्न संस्थाओं के मध्य सहयोग हो तथा इस शिक्षा स्तर के गुणात्मक व मात्रात्मक विकास के लिए नये मार्ग खोज निकाले जाएं।

(11) 1986 तक पूर्व-प्राथमिक शाला स्तर (आयु वर्ग 3-5) में 5% जन-संख्या को भरती करने का लक्ष्य रखा जाए।

15. 1968 में भारत सरकार के समाज कल्याण मंत्रालय ने बाल कल्याण की एक समिति गठित की, जिसे 'गंगाशरण सिन्हा समिति' कहा जाता है। इस समिति ने स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा चलाई गई पूर्व-प्राथमिक शालाओं को आर्थिक, तकनीकी व नैतिक प्रोत्साहन दिये जाने और कम मंहगे साधनों के विकास पर बल दिया।

16. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में पूर्व-प्राथमिक शालाओं के विकास में स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका पर बल दिया गया।

17. 1972 में श्रीमती मीना स्वामीनाथन् की अध्यक्षता में भारत सरकार ने एक अध्ययन दल गठित किया, जिसने पूर्व-प्राथमिक शिक्षा को विकसित व सशक्त करने के लिए अनेकानेक उपयोगी सुझाव दिये। उनके अनुसार उस समय 1972 में देश में केवल दस लाख बालक पूर्व-प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे, 1981 तक उनकी भर्ती में 10% या 50 लाख बालकों की वृद्धि करने की कोशिश होनी चाहिए का सुझाव दिया गया। पूर्व-प्राथमिक शिक्षा में कई

प्रकार के नमूने सुझाये गये जैसे नगरीय गंदी बस्तियों के लिए विशेष अर्द्धदिवसीय बालवाड़ियां, प्रथम चरण केन्द्र तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 'आंगनवाड़ी' इत्यादि।

18. पांचवी पंचवर्षीय योजना (1975-80) में 3-6 आयु वर्ग के बालकों के लिये चुने हुई प्राथमिक शालाओं में 'बाल क्रीड़ा केन्द्र' खोले गये।

19. 1966 में स्थापित हुए पूर्व-प्राथमिक शिक्षा भारतीय संस्था तथा 1983 में स्थापित हुए नर्सरी शिक्षा भारतीय संस्था नामक दो स्वैच्छिक संघ भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा में सुधार लाने की दिशा मे कार्यरत हैं।

20. 22 अगस्त 1974 को भारत सरकार ने बाल राष्ट्रीय नीति को निर्धारित किया। उसमें बालकों के अधिकारों का संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र के प्रति निष्ठा व्यक्त की गई तथा बालक को राष्ट्र का सर्वोच्च महत्व का धन माना गया।

21. मानव भारती प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली की प्रधानाचार्या श्रीमती प्रेमलता के एक लेख के अनुसार भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विकास से संबंधित निम्नांकित आंकड़े उसकी अल्पविकसित स्थिति को प्रदर्शित करते हैं :

- —3-6 वर्ष के आयु वर्ग मे भारत की जनसंख्या का केवल 12·5% भाग पूर्व-प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहा है।
- —1985 तक 20%, 1990 तक 35%, 2000 तक 65% जनसंख्या को पूर्व-प्राथमिक शिक्षा प्रदान करवाने का लक्ष्य रखा जा रहा है।

विश्व में बाल-शिक्षा की वर्तमान स्थिति

1976 में यूनेस्को ने "पूर्व-प्राथमिक शिक्षा विश्व सर्वेक्षण" नामक प्रतिवेदन प्रकाशित किया था। यह प्रतिवेदन विश्व के 67 देशों से प्राप्त जानकारी पर आधारित था। 48 देशों से प्राप्त उपयोगी उत्तरों से निम्नांकित तथ्य ज्ञात हुए हैं, जो विश्व में बाल-शिक्षा की वर्तमान स्थिति को दर्शाते हैं :

1. पश्चिमी यूरोपीय देशों में प्रायः फ्रोबेल व मोंटेसरी शिक्षा उपागमों के अनुसार बाल-शिक्षा दी जाती रही है। बेल्जियम और फ्रांस मे डिकरोली नामक शिक्षा शास्त्री के विचारों का भी प्रभाव पड़ा है। पूर्वी यूरोप के समाजवादी देशों में मोंटेसरी की अपेक्षा फ्रोबेल का अधिक प्रभाव देखने में आता है। अंग्रेजी का प्रचलन वाले देशों में

मैकमिलन बहनों के अनौपचारिक शिक्षा सिद्धांत प्रचलित रहे हैं। यू० एस० ए० में कुछ पद्धतियां विकसित की गईं, ताकि क्षतिपूर्ति प्रदान की जा सके। अफ्रीका, एशिया और लेटिन अमेरिका के अधिकांश देशों में परम्परागत विधियों (फ्रोबेलियन, मोंटेसरी व मैकमिलन) का मिश्रण व कहीं-कहीं स्वतंत्र विधि भी देखने में आती है।

2. अफ्रीका, लेटिन अमेरिका व एशिया के 8 देशों में 2 वर्ष से कम आयु के बालकों को पूर्व-प्राथमिक शाला में भरती कर लिया जाता है।

इस प्रकार हमने देखा है कि बाल-शिक्षा के क्षेत्र में कई विचारों का योगदान रहा है तथा यह क्षेत्र बहुत अधिक आकर्षण प्राप्त करता जा रहा है। यद्यपि अभी तक विकासशील देशों में बाल-शिक्षा की सुविधाएं बहुत अधिक विकसित नहीं हुई हैं। यद्यपि इस ओर अधिकाधिक शिक्षकों, माता-पिताओं तथा प्रबुद्ध नागरिकों का ध्यान आकर्षित हो रहा है। भारत में भी इस दिशा में अब सभी को रुचि है तथा राजकीय व स्वयंसेवी संस्थाएं इसके विकास में जागरूक हैं।

अध्याय-9

बालकों में आदतों, मूल्यों, रुचियों और क्रियात्मकता का विकास

आदतें व्यक्ति के व्यवहार के निश्चित तरीके होती है, जिनमें बुद्धि अथवा तर्क का प्रयोग नही होता । आदतो का जीवन में बहुत महत्व होता है । वे हमारा समय बचाती हैं, हमें थकने से बचाती हैं, हमें किसी भी काम को करने मे सही बनाती हैं, कार्यकुशलता और सुगमता को विकसित करती हैं, और शिक्षा ग्रहण में सहायता देती हैं । लेकिन दूसरी ओर यदि गलत आदतें पड जाए, तो उन्हे तोड़ना बहुत कठिन होता है तथा उनसे व्यक्तित्व के विकास, व्यवस्थापन तथा सामाजीकरण मे बहुत कठिनाई होती है ।

अत: बालको में सही प्रकार की आदतें शुरू से ही डालने का प्रयास करना चाहिए । किसी गलत आदत को मार-पीट, डर या अत्यधिक चिंता दिखलाकर खत्म करने का प्रयास नही करना चाहिए अपितु, उसकी ओर ध्यान न देकर-तथा उसको प्रयोग मे न लाने देने द्वारा समाप्त करना चाहिए । उसके विरोध मे उत्तम आदतें विकसित करनी चाहिएं ।. तर्क सगत ढग से बालक को प्यारपूर्वक समझाना चाहिए । प्रतिदिन सही आदत को सीखने की दिशा मे कार्य करना चाहिए । उत्तम व्यवहार पर पुरस्कार तथा गलत व्यवहार पर दण्ड दिया जाना चाहिए । नियमितता का सिद्धांत बहुत महत्वपूर्ण है । बालको की आदतो के सही निर्माण मे बड़ो की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है । उन्हे न्याय, समता, प्यार तथा कोमलता के साथ बालको से व्यवहार करना चाहिए । बालक की कठिनाइयो को समझने का प्रयास करना चाहिए बालक 'लघु मनुष्य' न होकर एक बाल है—यह सदैव ध्यान मे रखना चाहिए उसकी समस्याओ को अपनी समझ के स्तर से तुलना करने का प्रयास न करना चाहिए अपितु उसके स्तर तक नीचे उतरने का प्रयास करना चाहि[ए] झिडकने, व्यंग्य व मारपीट से उसके स्व: को ठेस नही पहुंचानी चाहिए । बा[लक]

जब कोई कार्य तन्मयता से कर रहा हो तो उसे बीच-बीच में सुझाव या हिदायतें देकर हतोत्साहित नही किया जाना चाहिए। गांधीजी का मत था कि अध्यापकों को बालकों के सम्मुख सदैव प्रसन्न मुद्रा में ही उपस्थित होना चाहिए। "यदि एक अध्यापक क्रुद्ध, मुन्द अथवा चिड़चिड़े स्वभाव को लेकर पाठशाला में आता है, तो वह बालको के प्रति अपने उत्तम व्यवहार को तो खराब कर ही रहा है, इसके अतिरिक्त उनके जन्मसिद्ध-अधिकार प्रसन्नता, को भी ठेस लगाने का यत्न कर रहा है। ऐसे अध्यापक को बालक प्रेम नही करेंगे व उसको श्रद्धा नही देंगे।"

डॉ० जाकिर हुसैन का सुझाव है, "बच्चे को ईश्वर का अंश समझिए। न वह आपकी संपत्ति है, न वह आपका खिलौना। वह तो आपके पास ईश्वर और मनुष्यता की एक धरोहर है। उसको जो सहज वृत्तियां प्रकृति ने प्रदान की हैं, उन्हें न बहुत उकसा कर बिगाड़िए, न बहुत दबाकर, और हां, इस बात का दूसरा पहलू भी याद रहे कि अगर बच्चा आपका खिलौना नहीं है, तो आप भी बच्चे के खिलौने नही। आप भी ईश्वर के अंश हैं, बस कुछ अधिक अनुभवी। न आप उस पर जुल्म करें, न वह आप पर। न आप उससे खेलें, न वह आपसे। दोनों में एक-दूसरे पर भरोसा हो, प्रेम हो...।"

शिक्षा-शास्त्री टी० पर्सीनन का मत था, "बालक परम्पराओं का बहुत दृढ़तापूर्वक पालन करते हैं।" अतः घर और पाठशाला दोनों में ही उत्तम परम्पराओं को डालने का प्रयास करना चाहिए। बालकों को उनके अधिकारों व कर्त्तव्यों के बारे मे विशेषकर कर्त्तव्यो के बारे में, भलीभांति व्यवहारिक ढंग से बतलाना चाहिए। उसमें सफाई, पढ़ाई, व्यवहार, खानदान, आदि की उपयुक्त आदतें डालने का प्रयास करना चाहिए। उसके सामने बड़ो को अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करने चाहिए, तथा सही प्रकार के सुझाव देने चाहिए। यथासंभव बाल-सुलभ तर्क द्वारा उनकी समस्याओं का समाधान किया जाना चाहिए। अधिक लाड़-प्यार से उन्हें नाजुक, दूसरो पर निर्भर, घमंडी, असभ्य और बिगड़ा हुआ न बनाये। बालकों को अनावश्यक धन देकर फिजूलखर्ची करने की आदत उनमे न डालें। उन्हें अश्लील तथा निकृष्ट श्रेणी का 'कामिक' साहित्य न पढ़ने दें।

मूल्यों का विकास

बालकों में उपयुक्त मानवीय तथा सामाजिक मूल्यों का विकास किया जाना चाहिए। प्रमुख मानवीय मूल्य हैं—सत्य, धर्म, शांति, प्रेम और अहिंसा। ये मूल्य सभी धर्मों में मूलभूत रूप से पाये जाते हैं, अतः इनका विकास सभी बालकों में होना आवश्यक है। सामाजिक मूल्य समाज व संस्कृति विशेष के प्रभावी मूल्य होते हैं, जिन्हें मान्य या उचित माना जाता है। भारतीय समाज में परंपरागत और आधुनिक मूल्यों दोनों का अस्तित्व और परस्पर टकराहट देखने में आती है। माता-पिता और शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि वे यह निरंतर प्रयास करते रहें कि इन दोनों प्रकार के मूल्यों में से कौन-कौन से मूल्य उपयुक्त हैं, उनका चयन करें तथा बालकों में उनको विकसित करने का प्रयास करें। भारतीय संस्कृति के कई परम्परागत मूल्य बहुत उपयोगी और महत्वपूर्ण हैं और इसी प्रकार कई आधुनिक मूल्य भी उपयोगी हैं। ऐसे उपयुक्त मूल्यों को बालको में कहानी, उदाहरण, उपदेश, वास्तविक व्यवहार, काल्पनिक परिस्थितियां उपस्थित करके तथा पुस्तकों, कहानी वार्तो, कविताओं, गीतों, व उपयोगी सामूहिक क्रियाओं, नाटकों, अन्य प्रकार के आयोजनों आदि के द्वारा विकसित करना चाहिए। बालकों को ईश्वर, विभिन्न धर्मों, विभिन्न संस्कृतियों विभिन्न देशों के महापुरुषों तथा धर्मप्रवृत्तकों, विविध प्रकार की रोचक पौराणिक और वास्तविक कहानियो के बारे में बतलाया जाना चाहिए। सभी धर्मग्रन्थों में बहुत-सी उपयोगी नैतिक कहानियां मिलती हैं। 'अमर चित्रकथा' शृंखला में इंडियन बुक हाउस ने महापुरुषों के जीवन पर रोचक पुस्तकें प्रकाशित की हैं। अन्य प्रकाशकों ने भी अनेकानेक जीवन-गाथाएं, उपयोगी पुस्तको व कविता सग्रहों को प्रकाशित किया है। पत्र-पत्रिकाओं में प्रति-दिन बहुत उपयोगी सामग्री छपती है। हमारी संस्कृति में वैदिक मंत्रों की बहुत महत्ता रही है। इन सभी महत्वपूर्ण सामग्रियों का प्रयोग करते हुए बालको में उचित मूल्यों को विकसित किया जाना चाहिए। बालकों में सामाजिकता, सामाजिक संवेदनशीलता, सहयोग, दया, सहानुभूति सहिष्णुता, सच्चरित्रता, तार्किकता, विनय और स्वशासन का विकास हो— इस दिशा में सभी बड़ों को बहुत प्रयास करना चाहिए। विडियो, फिल्में, सस्ता गंदा साहित्य, अश्लील फिल्मी व अन्य पत्र-पत्रिकाएं, तथा घटिया फिल्मे व नाटक बालकों के नैतिक व सामाजिक विकास मे बाधक हैं कई माता-पिता बालकों को पिस्तौल, बन्दूक

जैसे खिलौने देते हैं, तो उनमें हिंसा को उभारते हैं। बालकों के खेल-खिलौने भी उनके भोजन व पोशाक की भांति ही सात्विक प्रवृत्ति को उभारने-वाले होने चाहिएं। यह प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्ष, समाजवाद, विज्ञान मानववाद तथा अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव का युग है। बालकों में इनके अनुरूप उपयुक्त मूल्य विकसित करने की ओर सभी को सचेष्ट रहना चाहिए।

रुचियों का विकास

बालकों में स्वाभाविक रूप से जिज्ञासा व क्रियात्मकता पायी जाती है। उन्हें निस्तेज व निष्क्रिय बैठे रहना अच्छा नहीं लगता। वे सदैव खेलना-कूदना व कुछ-न-कुछ क्रियात्मक कार्य करना चाहते हैं। उनकी स्वाभाविक जिज्ञासा प्राकृतिक वातावरण में विद्यमान पेड़-पौधों, फूल-पत्तियों, पशु-पक्षियों, चांद-सितारों तथा आस-पास की घरेलू चीजों, घड़ी, खिलौनों आदि में होती है। वे कई प्रकार के रुचि-कार्यों तथा चित्रकारी, संगीत, नृत्य, खेलकूद, कागज, मिट्टी की चीजें बनाने, बागबानी आदि को करना चाहते हैं। वे घर की चीजों जैसे घड़ी, पंखा, रेडियो, कलम, दवात आदि को उठाकर व गिरा-पटक या उलट-पलट कर देखना-समझना चाहते हैं। उन्हें ऐसा करने में आनन्द आता है।

सभी शिक्षा-शास्त्रियों व बाल-मनोवैज्ञानिकों का यही मत है कि बालकों को अपनी रुचि के अनुसार कार्य करने देना चाहिए तथा उनकी स्वतन्त्रता, स्वच्छन्दता व निरंतरता में बाधा नहीं डालनी चाहिए।

लेकिन माता-पिता व शिक्षकों को ऐसा पसन्द नहीं आता। वे तीन प्रकार की चिंताओं से ग्रस्त रहते हैं और इसलिए आपत्ति करते है : प्रथम, ऐसा करने से बालकों का पढ़ाई की ओर ध्यान नहीं जाता; द्वितीय, ऐसा करने [redacted] बालक चीजों को तोड़-फोड़ देते हैं, जिससे परिवार को आर्थिक हानि हो सकती है; तृतीय, ऐसा करने से बालको में उच्छृंखलता, जिद्दीपन तथा कुंठा पनप सकती है। वास्तव में आपत्तियां निर्मूल हैं। बालकों को अपनी रुचि के कार्यों को तन्मयता व लगन से करने देना चाहिए। फ्रोबेल, टैगोर, मोंटेसरी जैसे महान् शिक्षा-शास्त्रियों ने इसको बालको के उपयुक्त विकास के लिए अत्यंत आवश्यक माना है।

बालकों में क्रियात्मकता का विकास

जब हम बालकों में क्रियात्मकता के विकास की बात सोचते हैं, तो हमारे

सामने निम्नांकित दो प्रसिद्ध कथन प्रेरणास्वरूप आते हैं—प्रथम मनोवैज्ञानिक एरिक एरिकसन के शब्दों में, "एक बालक के उत्साह को भंग करना सबसे अधिक खतरनाक जहर है।"

द्वितीय, विश्व कवि डॉ० रविन्द्रनाथ टैगोर के शब्दों में, "भूगोल पढ़ाने के लिए बालक से उसकी पृथ्वी को, तथा व्याकरण सिखाने के लिए उसकी भाषा छीन लेते हैं। उसकी भूख पौराणिक गाथा के लिए होती है, लेकिन उसे तथ्यों और तारीखों को ऐतिहासिक विवरण दिए जाते हैं। वह एक मानव विश्व में पैदा होता है, लेकिन उसे बोलते हुए ग्रामोफोनों की दुनिया में देश निकाला दे दिया जाता है।"

वास्तव में बालक की सृजनात्मकता को विकसित करने की बड़ी आवश्यकता है। ऐसा तभी संभव हो सकता है, जबकि बालक मानसिक रूप से संतुष्ट व प्रसन्न हो। जब उसकी आवश्यकताएं संतुष्ट होंगी, तब ही वह संतुष्ट हो सकता है। प्रसन्नता हंसने, चीखने-चिल्लाने, ताली बजाने और इधर-उधर भागने दौड़ने में नहीं होती है। वह तनाव-मुक्ति में होती है, जिससे शांति, शांत-प्रसन्नता, मुस्कराहट, मिठास और मित्रता उपजती है। किसी भी कार्य को करने में जब स्वतंत्रता, निरंतरता, ध्यान केंद्रता तथा आनंद की प्राप्ति होती है, तो सृजनशीलता का विकास होता है। कार्य की पूर्णता उद्देश्य प्राप्ति की सफलता बालक को न केवल प्रसन्नता प्रदान करती है, अपितु वह उसे सृजनात्मकता की दिशा में और अधिक प्रोत्साहित करती है।

सुप्रसिद्ध शिक्षा मनोवैज्ञानिक प्रो० एम० के० रैना के अनुसार बालकों में खोजने की प्रवृत्ति को विकसित करना चाहिए। परिवार और शाला दोनों में उसकी खोजने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलना चाहिए। प्रायः यह देखने में आता है कि परिवार में तो बालकों की खोजने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया जाता है, लेकिन पाठशाला में शिक्षक उसे हतोत्साहित करते हैं।

बाल शिक्षा के क्षेत्र में प्रसिद्ध कार्यकर्त्री श्रीमती मीनास्वामी नाथन ने बालकों के विकास के लिए सृजनात्मकता के संबंध में निम्नांकित अत्यन्त महत्वपूर्ण बातें कही हैं, जिन्हें सभी माता-पिता और बाल-शिक्षकों को ध्यान में रखना चाहिए :

1. जब बालक कुछ बना रहे होते हैं, तब वे अपने विचारों और भावनाओं को व्यक्त कर रहे होते हैं।

2. यह याद रखिए कि जिन चीजों को बालक स्वयं बना सकते हैं, उनको बनाने में ही उन्हें सर्वाधिक आनंद आता है।

3. बालकों की सृजनात्मक क्रियाओं को आयोजित करते समय निम्नांकित बातों का ध्यान शिक्षकों व माता-पिताओं को रखना चाहिए :

(क) सभी आवश्यक सामग्रियों को पहले से ही एकत्र कर लेना चाहिए।

(ख) पुराने डिब्बों, कनस्तरों, बक्सों आदि को सामान रखने-करने के लिए एकत्र कर लेना चाहिए। प्रत्येक पर लेबल लगा देना चाहिए कि उसमें क्या वस्तु रखी है।

(ग) बालकों को इस प्रकार प्रशिक्षित करें कि वे एक क्रिया के बाद कमरे को स्वच्छ कर दें, तथा प्रत्येक वस्तु को सफाई से उसके उपयुक्त स्थान पर रख दें।

(घ) सभी बालकों को एक ही समय में एक ही क्रिया नहीं देनी चाहिए, क्योंकि इससे मतिभ्रम फैल जाता है। एक कालावधि में तीन से पाच क्रियाओं को आयोजित किया जाना चाहिए, जिन्हें बालकों के समूह कर सकते हैं।

(ङ) बालकों को नकल करने के लिए कोई मॉडल न दें। उदाहरणार्थ, श्यामपट या कागज पर कोई फूल का चित्र बनाकर देना और उसे नकल करना कहना गलत है। उन्हें स्वयं बनाने दें।

(च) बालकों को कार्य के आवश्यक औजारों व सामग्री तथा पेंसिल, ब्रुश, कैंची आदि का सही ढंग से उपयोग करना सिखलाइए।

(छ) बालकों को पहले आसान कार्य करने देना चाहिए। उसके बाद नये कार्यों की ओर अग्रसित होने के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

घरों और पाठशालाओं में बालकों की सृजनात्मकता को विकसित करने के लिए गीली मिट्टी, प्लास्टसीन, प्लास्टर ऑफ पेरिस, कपड़ा, रंगबिरंगे कागज। रंग, चाक, लकड़ी, मोती, सीप, पंख आदि अनेकानेक वस्तुओं को रखा जाना चाहिए। बालकों के लिए घर में अपनी ऐसी वस्तुओं व खेल-खिलौने को रखने के लिए अलग कमरा, अलमारी, कोना या स्थान होना

चाहिए। पाठशाला मे ऐसा वातावरण बनाने का हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए, जिसमें बालकों को ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा का विकास हो सके। प्रत्येक पाठशाला के समय, विभागों में सृजनात्मक कार्यों में भाग लेने के लिए बालकों को पर्याप्त समय मिलना चाहिए। बालकों में तुकबंदी, कविता, गीत बनाने, कहानियों के रचना करने तथा नये-नये खेल बनाने की स्वाभाविक विलक्षणता पाई जाती है। उसका विकास किया जाना चाहिए।

अध्याय-10

बालकों का मनोरंजन और उनकी शिक्षा

छोटे बालकों के विकास व शिक्षा को मनोरंजन के माध्यम से करने का प्रयास करना चाहिए। उनको कहानी, संगीत, पहेली, खेलकूद, नृत्य, चित्रकारी आदि में बहुत रुचि होती है। इन प्रवृत्तियों को उभारने का माता-पिताओं तथा शिक्षकों को भरपूर प्रयास करना चाहिए।

कहानी

बच्चों की कहानियों की विषय-वस्तु तथा उनको कहानी सुनाने का ढंग रोचक होना चाहिए। बच्चों की कहानियां पशु-पक्षियों, परियों, देवी-देवताओं और प्राकृतिक वस्तुओं तथा सूर्य, चन्द्रमा, हवा, वायु आदि के बारे में हो सकती हैं। यथासंभव परियों, अलौकिक तत्वों, अंधविश्वासों व अतार्किक विषयों के बारे में कहानियां नहीं होनी चाहिए। कहानियों द्वारा उनकी बुद्धि तथा नैतिक व सामाजिक गुणों का विकास भी मनोरंजन के साथ-साथ होना चाहिए। कहानियां छोटी-छोटी हों। उनमें यदि कोई टुकड़ा बार-बार आये तो कहानी का आकर्षण बढ़ जाता है। कहानी में बच्चों के वर्तमान परिवेश का समावेश किया जाना चाहिए, जैसे पशु-पक्षियों की कहानियों में भी टेलीफोन, टैक्सी, कार, स्कूटर, टी॰ वी॰, टॉफी, चॉकलेट [illegible] प्रयोग नगरीय वातावरण में [illegible] के लिए किया जा सकता है। [illegible] बालकों को कहानियां बहुत रोचक, [illegible] होगी। बालकों को [illegible] कहानियां [illegible] उनमें बालक में [illegible] कहानियां [illegible] संभव हो [illegible] बालकों को [illegible] सुनानी चाहिए। [illegible] कि [illegible] कहानियां [illegible] कहानियां [illegible] है। कहानी [illegible]

कहानी के मुख्य पात्रों का पूरा स्मरण कराने के लिए प्रत्यास्मरण सम्बन्धी प्रश्न पूछे जाने आवश्यक हैं। बालकों को अपने शब्दों में कहानी का पुन: वर्णन करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

बालकों को स्वयं अपनी कहानियां कहने को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

इला केम्पटन नामक एक ब्रिटिश नर्सरी ,शिक्षा का कार्यकर्त्री के द्वारा सुनाई कहानी के बारे में निम्नांकित महत्वपूर्ण सुझाव हैं :

"कहानी को सरल बनाइए। बालकों और उनके रोजाना के जीवन के वातावरण का वर्णन कहानी में कीजिए। छोटे बच्चों को कहानी सुनाते समय ध्यान रखिए कि बिल्कुल तनिक-सा भी भय पैदा करने वाली किसी भी चीज का उल्लेख न कीजिए। बड़े बच्चे थोड़ा-सा भयभीत होना भी पसंद करते हैं, बशर्ते कि अन्त में सब कुछ ठीक हो जाये। कहानी को पढ़कर सुनाने के स्थान पर उसके एक भाग पर ही पात्रों तथा उनके आसपास के माहौल के विस्तृत विवरण को आप दे सकते हैं। प्रचुर संख्या में हावभावों और ध्वनि के प्रभावों से आप कहानी की रोचकता के अभाव की पूर्ति कर सकते हैं।

बालकों की कहानी में रुचि बनी रहे इसके लिए आप उनसे यह बार-बार पूछ सकते हैं, "बताओ, फिर आगे क्या हुआ होगा ?" कभी-कभी कहानी को अधूरी सुनाए और बच्चों से उसे पूरा करने को कहें। यदि वे कहानी के अंत से संतुष्ट न हों, तो उन्हें अपनी इच्छानुसार कहानी का अन्त करने को प्रेरित करना चाहिए। यदि कभी वे स्वयं आपके पास किसी कथानक को लाएं जैसे उस समय के बारे में कहानी सुनाइए, जबकि जोसफ अपनी दादी के घर गया था, तो उनके सुझावों को समझ कर आप उनको वस्तुओं या परिस्थितियों को समझाने में तथा उनकी चिन्ताओं को दूर करने में मदद कर सकते हैं।

यदि कभी आपके पास विचारों का अभाव हो जाता है या आप कहानी को काट कर वहीं समाप्त करना चाहते हैं, तो कहानी में यह बताइये कि कहानी के सभी पात्र (चाहे वे कुछ भिन्न कार्य कर रहे हों) अचानक इतने भूखे हो जाते हैं कि वे हर कार्य को छोड़कर चाय नाश्ता करने को घर भाग जाते हैं। या थककर सो जाते हैं और अगले दिन सुबह होने तक उठते ही नहीं।

बच्चों को कहानियां सुनाने से उनको अपनी कल्पना का उपयोग करने का प्रोत्साहन मिलता है, आपके प्रश्नों के उनके उत्तर आपको वे क्या सोच रहे हैं और आप द्वारा बताई गई बातों को कितना समझ पाये हैं, यह जानने मे सहायक होते हैं। अपने बालकों के लिए विशेष कहानियां बनाना एक बहुत प्रशंसनीय तथा सार्थक कार्य है।

संगीत

संगीत सभी को प्यारा लगता है। छोटे बालकों को लोरियां, जिनमें कानों को प्रिय लगने वाली लय होती हैं, बहुत भाती हैं। मां बच्चों को पालने में लिटाकर लय से जो गीत सुनाती है, उसे पालने का गीत कहते हैं। ये गीत अर्थ-प्रधान न होकर लय-प्रधान होते हैं। इनमें ऐसी शब्दावली का प्रयोग किया जाता है, जो मात्र सुखद होती हैं और जो उच्चारणसाम्य के कारण लय युक्त है। इन पालने के गीतों में दो या तीन से अधिक शब्द नहीं होते। गाते समय इन गीतों की आवाज झुलाये जाते हुए पालने की आवाज के समान होती है। इन गीतों का शिशु के स्नायुओं पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है और बच्चा तुरन्त सो जाता है।

बालकों को चलना सिखाने, चन्दा को दिखाने, चिड़ियों और पशुओं की ओर आकर्षित करने, पिता का पिंडलियों पर ऊंचा उठाते हुए, तथा विभिन्न प्रकार के खेल कराते समय तरह-तरह के संगीतमय गीत हमारे देश में प्रचलित हैं। बालकों को प्रिय लगने वाले कुछ रोचक गीतों को देखिए :

चन्दा मामा

चन्दा मामा दूर के, पुए पकाए बूर के।
आप खाएं थाली में, मुन्ने को दें प्याली में।
प्याली गई फूट, मुन्ना गया रूठ।
प्याली आई और मुन्ना आया दौड़।
लायेंगे नई थालियां, बजा-बजाकर प्यालियां।
मुन्ने को मनायेंगे, दूध मलाई खायेंगे।

बालकों को खेल-ही-खेल में पशुओं के नाम याद करने का सुन्दर बाल गीत :

मेंढकी

बीबी मेंढकी री, तू तो पानी में की रानी,
कोळआ तेरा भाई-भतीजा, चील तेरी देवरानी,
बगुला तेरा छोटा देवर, तू कहां की रानी ?
छोटी-सी मैं केतली,
छोटी और मोटी,
ये है मेरा हैंडल,
ये है मेरी टोपी ।
जब चाय उबले,
मुझे नीचे उतारो;
चीनी मिलाओ,
झट पी जाओ ।

पूसी बाई

पूसी बाई, पूसी बाई, कहां-कहां से आई हो,
कितने चूहे मारे तुमने,
कितने खाकर आई हो ?

क्या बतलाऊं शीला बाई
आज नहीं कुछ पेट भरा
एक मिला जो चूहा मुझको,
वह भी बिल्कुल मरा हुआ ।

इतना पानी

हरा समंदर गोपी चंदर
बोल मेरी मछली कितना पानी ?
हां, मियां जी, इतना पानी ।

देख ले

डमरू बोला डिम-डिम-डिम,
भालू नाचा छम-छम-छम ।
मुन्नू, आजा देख ले !
चुन्नू, आजा देख ले !
कोयल बोली—कू-कू-कू,
मुर्गा बोला—कुकड़ू-कूं ।
पप्पू आजा देख ले !
गप्पू, आजा देख ले !

मामा

अटकन-मटकन दही-चटोकन
मामा लाए सात कटोरी,
एक कटोरी फूटी,
मामा की बहू रूठी, काहे बात'पे रूठी
दूध दही बहुतेरा, खाने को मुह टेढ़ा ।

वर्षा

बरसो राम धड़ाके से ।
बुढ़िया मर गई फाके से ।
बरसो राम धड़ाके से,
बुढ़िया मर गई फाके से ।

रेल

छुक-छुक करती रेल चली,
करती कितने खेल चली ।
जाना है किस ओर कहो;
टिकट उसी नगरी का लो ।

बिजली

बिजली चमकी, बरसा पानी,
मेंढक करते हैं, शैतानी ।
भीग गई जब तितली रानी
सिर पर नन्हीं छतरी तानी ।

चूहा

चू-चू चा-चा
घड़ी में चूहा नाचा,
घड़ी ने एक बजाया,
चूहा नीचे आया ।

गुड़िया

सूरज निकला, डूबे तारे,
घर के बिछे बिछौने सारे।
सो जा गुड़िया, सो जा रानी,
आज कहूंगी नहीं कहानी।

बन्दर

जंगल में मोर नाचे छम-छम-छम !
पेड़ों पर बंदर कूदे धम-धम-धम !
गंगा की लहरें उठती हर-हर-हर !
आसमान में चिड़ियां उड़तीं फर-फर-फर !
बच्चों की मोटर बोले पम-पम-पम !
स्कूल के अच्छे बच्चे छम-छम-छम।

राही

नन्हा-मुन्हा राही हूं, देश का सिपाही हूं,
बोलो मेरे संग, जय हिंद, जय हिंद, जय हिंद।

तितली

तितली रानी, तितली रानी,
हो कितनी तुम चतुर सयानी,
मिले तुम्हे हैं पंख रंगीले,
लाल-बेंगनी नीले-पीले।

मोर

सुन्दर नाच दिखाता मोर,
सबका मन बहलाता मोर,
मस्ती से इतराता मोर,
किसको नहीं सुहाता मोर ?

गर्मी

पानी बरसा झम-झम-झम,
हुई आज गर्मी है कम,
धरा हो गई फिर से नम,
नाचें-कूदें हम-हम-हम ।

घोड़ा

तिक-तिक-तिक, तिक-तिक-तिक, चल मेरे घोड़े तिक-तिक-तिक !
सरपट-सरपट भागे तू, चले पवन से आगे तू ।
बड़ी निराली तेरी चाल, आसमान तक भरे उड़ान ।
चलता तू मतवाली चाल, दिखलाता है नये कमाल ।
सिर पर कलगी लहराती, वीरों का है तू साथी ।

मछली

मछली जल की रानी है,
उसकी जीवन पानी है ।
हाथ लगाओ डर जाएगी,
बाहर निकालो मर जाएगी ।

मोटर

पों ! पों ! पों-पो ! दिया सुनाई !
शायद कोई मोटर आई।
मोटर के आगे जो आता।
मोटर के नीचे दब जाता।
मोटर आए तो हट जाना।
कभी न उसके आगे आना।
सचमुच आई ! मोटर आई।
दौड़ो भाई ! दौड़ो भाई।

बन्दर

बंदर ने एक शीशा पाया,
मुखड़ा देखा बड़ा मुस्काया।
बहुत दिनों के बाद नहाया,
कितनी सुन्दर हो गयी काया।

होली

होली आई, होली आई,
शोर मचाती टोली आई,
नीला, पीला, हरा, गुलाबी,
रंग घोल कर बारी-बारी
सभी छोड़ते भर पिचकारी
होली आई, होली आई।

सेब

सभी फलों में सेब है न्यारा ।
लाल गला-सा प्यारा-प्यारा ॥
एक सेब जो रोज है खाता ।
डॉक्टर को वह दूर भगाता ॥
मम्मी मुझको सेब दिला दो ।
वरना 'एप्पल जूस' पिला दो ॥

खरगोश

वह देखो आया खरगोश ।
लम्बे कान छोटी दुम
मटक-मटक कर चलते तुम ।
तुम्हारी नकल करेंगे हम
क्यों रहें हम किसी से कम ।

चिड़िया

चिड़िया मुझे बना दे राम !
छोटे पंख लगा दे राम !
बागों में जाऊंगी ।
बैठ डाल पर गाऊंगी ।
इतना-सा तू कर दे काम
चिड़िया मुझे बना दे राम !

पतंग

सर, सर, सर, सर
उड़ी पतंग ।

फर, फर, फर, फर
उड़ी पतंग।
इसको काटा उसको काटा
खूब लगाया सैर-सपाटा।
उड़ते-उड़ते जुड़ी पतंग,
अरे, अरे कट गई मेरी पतंग !

राकेट

चंदा के गांव में
तारों की छांव में
हम सैर करने जायेंगे
राकेट पर चढ़ जायेंगे।
बायां हाथ अंदर करो
दायां हाथ बाहर करो।
थोड़ा-थोड़ा इसे हिलाओ
अब सारे तुम घूम जाओ।
चंदा के गांव में
तारों की छांव में
हम सैर करने जायेंगे।
राकेट पर चढ़ जायेंगे।

मोटर

लाल-पीली मोटर
मैं उसका ड्राइवर।
हैंडल घुमाऊंगा,
मम्मी को बैठाऊंगा,
पापा को बैठाऊंगा,

दीदी को बैठाऊंगा,
भैया को बैठाऊंगा,
बम्बई ले जाऊंगा ।
कैम्पा-कोला पिलाऊंगा

टेलीफोन

टन-टन-टन टेलीफोन
हैलो बोल रहा है कौन
ये है मेरी मम्मी का फोन
पापा जल्दी आ जाना
सात समुद्र पार से
गुड़ियों के बाजार से
टॉफी लाना दस हजार,
पापा जल्दी आ जाना ।

गाजर और टमाटर

बच्चो खाओ कच्ची गाजर,
नींबू, खीरा और टमाटर,
लाल-लाल तुम बन जाओगे,
सुन्दर बच्चे कहलाओगे ।

कठपुतली

मैं छोटी-सी कठपुतली हूं,
रोना मुझको आता ना ।
लड्डू पेड़े हलवा खाती,

खाना पकाना आता ना।
बढ़िया-बढ़िया कपड़े पहनूं,
चमचम-चमचम गहने पहनूं,
रोना मुझको आता ना।

गुड़िया

यह देखो मेरी गुड़िया,
मम्मी तुमने देखी गुड़िया।
मैं झूले में इसे झुलाती,
इसके संग मैं भी सो जाती,
चंदा मामा तक हो आती।

कोयल

कुकुकू कू-कू, कुकुहूं कूं,
कोयल, आ मेरे घर तू,
हम तुम, दोनों खेलेंगे
कौवे को भी ले लेंगे,
फिर हम बाग लगायेंगे
फिर कुकुहूंकू गायेंगे,
घूमेंगे कुछ खाकर के
सोयेंगे घर जाकर के।

लाला जी

बड़ी सड़क पर जरा ठहर कर
लाला जी ने केला खाया,
केला खाकर मुंह बिचकाकर,

मुंह बिचकाकर तोंद फुलाया,
तोंद फुलाकर छड़ी उठाई,
छड़ी उठाकर कदम बढ़ाया,
कदम के नीचे छिलका आया,
लाला जी गिरे धड़ाम, धड़ाम,
हड्डी-पसली चकनाचूर,
मुंह से निकला हाय राम ! हाय राम ! !

प्यारा मौसम

सरसों पीली-पीली है,
अलसी नीली, नीली है,
चम्पा और चमेली की
शोभा रंग रंगीली की,

मारी कोंदल महक उठी
काली कोयल चहक उठी
भौंरों की नन्ही टोली
गुंजारों से महक उठी,

तितली फुर-फुर उड़ती है
फूल-फूल में उड़ती है,
धन्यवाद देकर सबका
झूम-झूम कर मुड़ती है,

मन चाहा मौसम आया
नई उमंगें भर लाया,
पुलक-पुलक रही सारी धरती,
सबने नवजीवन पाया ।

बादल बरसे

बिजली कड़के,
कड़-कड़-कड़कड़
बादल गरजें
गड़-गड़ गड़गड़
ओले पड़ते
तड़-तड़-तड़तड़
पानी बरसे
झड़-झड़ झड़झड़

डॉक्टर

डॉक्टर देखो भली प्रकार
मेरी गुड़िया पड़ी बीमार
रिमझिम-रिमझिम बरसा पानी
उसमें भीगी गुड़िया रानी।
गीले कपड़े दिये उतार
फिर भी गुड़िया पड़ी बीमार।
डॉक्टर देखो भली प्रकार
मेरी गुड़िया पड़ी बीमार।
थर-थर कांप रही है
इसे लगाओ थर्मामीटर
सौ के ऊपर डिग्री चार !
मेरी गुड़िया पड़ी बीमार।
डॉक्टर की ली मैंने पुड़िया
ले जाती हूं अपनी गुड़िया।
जब तक उतरे नहीं बुखार
तब तक पैसे रहे उधार।

बाल-गीतों को बालक बहुत पसन्द करते हैं। ऐसे बहुत से गीत मिलते हैं। प्रश्न उठता है कि इन गीतों की बालकों में लोकप्रियता के क्या कारण हैं? वस्तुतः इनकी भाषा सरल है, तुकबंदी प्रभावोत्पादक है, इसके साथ प्रायः अभिनय या क्रिया या भाव-भंगिमा प्रदर्शन सम्भव होता है, इनके विषय बालकों की रुचि की वस्तुएं, पशु-पक्षी, मछली, टेलीफोन, कार, वर्षा, होली आदि हैं।

बाल-गीतों के सम्बन्ध में यूनेस्को नई दिल्ली से 'धम्मक धम' (बच्चों के गीत) का प्रकाशन हुआ है, जिसकी लेखिका श्रीमती कमला भसीन ने भूमिका में निम्नांकित बहुत महत्त्वपूर्ण बात कही है . "...अधिकतर (बच्चों की) किताबों में लड़के-लड़कियां, मां-बाप, स्त्री-पुरुष के पुराने घिसे-पिटे 'स्टीरियो-टाइप' को दोहराया जा रहा है। उदाहरण के तौर पर अधिक किताबें लड़कों के बारे में हैं। लड़कों के खेल, उनके करिश्में, एडवेंन्चर्स, उनके रुपये-पैसों के प्रति अभिलाषाएं आदि। जो थोड़ी-बहुत किताबें लड़कियों के बारे में हैं भी, उनमें या तो लड़कियों को गुड़ियों से खेलते दिखाया है या सजते-संवरते।

जिन किताबों में लड़के लड़कियां दोनों हैं उनमें लड़के अधिकतर अगुवा है और लड़कियां उनकी सहायक पिछलग्गू, दर्शक या प्रशंसक। एक किताब की कहानी सुनिए—तीन छोटे-छोटे लड़के पतंग उड़ा रहे हैं। एक लड़के की बहन भी आई है। उसका काम है। चरखी पकड़ना (स्वाभाविक है)। भाई को कुछ देर के लिए कहीं जाना पड़ता है। वह पतंग की डोर लड़की को थमा जाता है। कुछ देर बाद जब वह लौटता है, तो देखता है कि पतंग लड़की को उड़ाए लिये जा रही है। लड़का भाग कर लड़की को पकड़ लेता है और उसे जीवन दान देता है। क्या इमेज बनाई है लड़की और लड़के की लेखक ने...। भाइयों के बिना कहां गुजारा है इन हल्की-फुल्की फूहड़ लड़कियों का। अनगिनत किताबों में लड़कियों को कमजोर, फूहड़, पराश्रित, डरपोक दिखाया जा रहा है।

स्त्रियों और पुरुषों की इमेज भी इन किताबों में वही पुरानी है। आज हजारों औरतें दफ्तर जाती हैं, हजारों वैज्ञानिक हैं, डॉक्टर हैं, शिक्षित हैं। औरतें अखबार और किताबें पढ़ती ही नहीं, लिखती भी हैं। औरतें खिलाड़ी हैं। कमाऊ हैं। बहुत से परिवारों में पुरुष भी घर के कामों में मदद करते हैं।

इन परिवर्तनों को चित्रित करने और उन्हें प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है, ताकि लड़के-लड़कियां दोनों बदलते समाज के साथ बदल सकें। आज लड़के-लड़कियां इकट्ठे पढ़ते हैं, दफ्तरों में इकट्ठे काम करते हैं, पति-पत्नी दोनों नौकरी करते हैं। इस माहौल में स्त्री-पुरुष के लिए जरूरी है कि वे एक दूसरे को समान समझें। घर के काम-काज में पुरुष भी हाथ बढ़ायें और बच्चों की परवरिश की जिम्मेदारियां उठायें। बाल-साहित्य नये समाज की झलक दे सकता है।

इस भूमिका के बाद श्रीमती कमला भसीन ने इसी दृष्टिकोण पर आधारित आधुनिक प्रयोगिक बाल-कविताएं लिखी हैं, जिनके कुछ रोचक व अनुकरणीय नमूने प्रस्तुत हैं :

मुन्ना

ताक धिन्ना धिन्न ता धिन्ना
छोटा-सा मेरा मुन्ना
अम्मा उसको दूध पिलायें
और पिता जी उसे नहलायें
मेरा काम हंसाना है
मुन्ने को बहलाना है
ताक धिन्ना धिन्न ता धिन्ना
छोटा-सा मेरा मुन्ना।

मंजन

आओ करें दांत में मंजन
जैसे चले गाडी का इंजन
छुक-छुक आगे छुक-छुक पीछे
छुक-छुक ऊपर छुक-छुक नीचे
मंजन के बाद कर लो कुल्ला
हा-हा हू हू हल्ला-गुल्ला।

कपड़े धोयें

आओ मिलकर कपड़े धोयें
हम सब मिलकर कपड़े धोयें
अम्मी तुम लगा दो साबुन
पापा उन्हें निचोड़ेंगे
पप्पू, दीदी और मैं मिलकर
उन्हें सुखाने दौड़ेंगे।
सूरज उन्हें सुखा देगा
जब वो साफ हो जायेंगे
हम सब पहन मुस्कायेंगे।

वास्तव में ये कविताएं बहुत प्रेरणादायक व परिवर्तनकारी हैं। इस प्रकार की कविताओं की माता-पिता और शिक्षकों को रचनाएं करनी चाहिए और बालकों को इन्हें सिखाना चाहिए।

यूनिसेफ नई दिल्ली ने 1984 में विश्व स्वास्थ्य दिवस पर 'मिनी और काकू' शीर्षक से स्वास्थ्य व पोषण सम्बन्धी कुछ बहुत रोचक गीतों का एक कैसेट प्रसारित किया है। उसकी कुछ प्रेरणास्पद बानगी देखिए, जो शिक्षण संस्थाओं को नि.शुल्क मिल सकती है।

भन-भन

ना जमने दें मैल की परतें
हम सुथरे हमारे कान भी सुथरे
कान में जब-जब होती खुजली
करती भन-भन नन्ही ऊंगली
ना लेते माचिस की तीली
खतरा कान को जो हो चीज नुकीली
फटे कान का पर्दा तो हो जायें बहरे
ना जी ना। हम बुद्धू थोड़े ही ठहरे!

मक्खी-मच्छर

दुश्मन हैं भई दुश्मन हैं
मक्खी-मच्छर दुश्मन हैं
गन्द पर बैठे, गन्द ही छोड़े
दुश्मन हैं भई दुश्मन हैं
मक्खी-मच्छर दुश्मन हैं
जल सदा ढक करके रखो
खाने को जाली से ढको
दूर भगाओ, दूर भगाओ
मक्खी-मच्छर दुश्मन हैं
कूड़ेदान को काम मे लाओ
कीचड़ पानी उलीचते जाओ
दुश्मन के छक्के छुड़वाओ
दुश्मन हैं भई दुश्मन हैं
मक्खी-मच्छर दुश्मन हैं।

हमारा बगीचा

हमारा बगीचा
ऊंचा-नीचा
छोटी-छोटी
बनी हैं क्यारी
जिनमें लहलहाती
सब्जियां सारी
छोटी डलिया में घूम-घूमकर
धनिया-टमाटर तोड़ें हम
गाजर, मूली, गोभी लेकर
मां के पास दौड़ें हम।

आंखें

आंखों की करो हिफाजत
भई आंखें हैं बड़ी नियामत
न हों तो बस, कयामत
जीना आफत-ही-आफत ।

इनसे गन्दगी जो दूर रहे
तो आंखें चमकती स्वस्थ रहें
रोज साफ जल से धोएं
ठीक रोशनी में पढ़ें ।

मेथी, सरसों, पालक, चौलाई
दूध, दही, घी, रबड़ी मलाई
गाजर, आंवला, पपीता, आम
आंखों में भरे उजालों के जाम ।

पहेली

बालकों से पहेलियां पूछने से उनका मनोरंजन तो होता ही है, साथ ही उनका ज्ञान भी बढ़ता है और उनकी निरीक्षण शक्ति का विकास भी होता है। पहेलियां रोचक, सरल शब्दों में, यथासंभव तुकबंदी में तथा बालकों के निकटतम वातावरण से लिए गये प्रसंगों पर होनी चाहिएं। कुछ रोचक उदाहरण इस प्रकार हैं :

1. कटोरे पर कटोरा, बेटा बाप से भी गोरा ।
(नारियल)

2. राजा सोये इस घर में, पैर पसारे उस घर में ।
(दीया)

3. हरी थी मन भरी थी, लाल मोती जड़ी थी,
राजाजी के बाग में दुशाला ओढ़े खड़ी थी ।
(भुट्टा)

4. नन्हे-मुन्ने दुर्गा मामा कपड़े पहने सौ-पचास।
(प्याज)

5. टिक-टिक करती रहती, कभी न थकती,
चलती रहती दिन और रात
टन-टन करके करती मनमानी,
बताओ वह है कौन ?
(घड़ी)

6. उजली धरती काला बीज,
देती हमको सुन्दर सीख ।
(किताब)

खेलकूद

बच्चों को खेलकूद में स्वाभाविक रुचि होती है। इनसे उनकी कसरत भी होती है और मनोरंजन, सामाजिकरण तथा सामाजिक व नैतिक विकास भी। खेल-खिलौनों के साथ और उनके बिना भी खेले जाते हैं। खेल शारीरिक क्रियाओं के हो सकते हैं और मानसिक क्रियाओं के भी हो सकते हैं। सामूहिक खेलो मे बच्चो को अधिक आनन्द आता है।

छोटे बालकों को मेढ़क की तरह फुदकना, चिड़िया की तरह फुदकना। चील की तरह उड़ना, खरगोश की तरह भागना आदि अच्छे लगते हैं। उनको हाथ कंधे की सीध में करने व सिर के ऊपर ले जाने के व्यायाम भी करवाना उचित रहता है। पंजों पर खड़े होना, पंजों पर फुदकना उनके लिए ठीक रहता है। गेंद बालकों की सबसे प्रिय वस्तु होती है। कई प्रकार की गेंद के खेल-खिलाये जा सकते हैं। उनको पानी, फूलो, फलों आदि के साथ खेलना आता है।

आजकल बालकों को कई प्रकार के खिलौने खेलने को दिये जाते हैं जो लकड़ी, प्लास्टिक, टीन, कागज, गत्ते आदि के बने होते हैं। अधिकतर प्लास्टिक के खिलौने खराब किस्म की प्लास्टिक के बने होते हैं तथा उनके रंग टॉक्सिक (जहरीले) होते हैं। खिलौने के कोने खुरदरे और नुकीले नहीं होने चाहिएं, जिससे कि बालकों के शरीर को उनसे खरोंचें न लगें। खिलौने बालको के लिए सुरक्षित होने चाहिएँ। लकड़ी के बने हल्के खिलौने विशेषकर उपयोगी रहते हैं। बच्चों को रुई भरे (स्टफ्ड) खिलाने भी बहुत पसन्द आते हैं। जो खिलौने खोले और दुबारा जोड़े जा सकते हैं, वे बच्चों को सिखाने मे बहुत उपयोगी होते है।

बच्चो के लिए जो खिलौने बनाये जायें उनकी उपयोगिता निम्नांकित कसौटियो से आंकी जानी चाहिए :

1. आकर्षण
2. काम मे लेने मे सुगमता
3. बालको की सहायता से उन्हे बनाना
4. अल्प मूल्य या बिना मूल्य
5. सहीपन और शैक्षणिक मूल्य

श्रीमती इंदिरा स्वामीनाथन के अनुसार बच्चों के खिलौनों को बनाते समय निम्नांकित का अवश्य ध्यान रखना चाहिए :

1. मौलिकता
2. सौन्दर्यानुभूति
3. सृजनात्मक उपयोग
4. सरलता/सादगी
5. दीर्घकालीन उपयोग

पाश्चात्य देशो में कई प्रकार के सुन्दर खिलौने बिकते हैं। वे मंहगे होते हैं। उनमें से कई को भारतीय अवस्थाओ के अनुसार सस्ता बनाया जा सकता है।

हमारे देश में सांप-सीढ़ी, चाइनीज चैकर जैसे खेल प्रचलित हैं। उनके नमूने के अन्य खेल बनाये जा सकते हैं, जिनमें सामान्य ज्ञान सिखाया जा सकता है। तरह-तरह के वाद्य-यन्त्रों, घरेलू वस्तुओं जैसे प्याले, तश्तरी, बर्तनों आदि के छोटे-छोटे नमूनों आदि को भी खिलौने के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। वस्तुतः माता-पिता और शिक्षकों को चाहिए कि वे बेकार वस्तुओं से उपयोगी व सृजनात्मक खेल-खिलौने बच्चों के लिये बनाएं व उनसे बनवाएं। इस दिशा में असीमित संभावनाएं हैं।

नृत्य

छोटे बालकों को नृत्य सिखाना चाहिए। उन्हें कृष्णलीला, विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के नृत्यों, देहातों विभिन्न अवसरों पर प्रचलित नृत्यों को सीखने में रुचि होती है। उच्चस्तरीय नृत्यों को सीखने की शुरूआत भी बचपन में ही की जा सकती है। नृत्यों के करते बालक-बालिकाओं का परिधान या साजसज्जा अवसर के अनुसार आकर्षक व प्रभावशाली होने चाहिएं। नृत्य के लिए मुकुट, तलवार, भाले, पंख, तरकस, तीर आदि कार्डबोर्ड व रंगीन कागजों से बनाये जा सकते हैं।

चित्रकारी

बच्चों को चित्रकारी का शौक होता है। उनमें यह शौक विकसित किया जाना चाहिये। इस संबंध में ध्यान रखने योग्य कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु हैं, तथा-विभिन्न प्रकार के रंग, कागज, पैंसिल आदि बालकों को देने चाहिएं, उनको उन्हें पहले से कोई चित्र बनाकर उसकी नकल करने को नहीं कहना चाहिए, स्वयं अपनी इच्छा से चित्रकारी करने देनी चाहिए। चित्रकारी के द्वारा वे अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। अतः उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता व लगन से कार्य करने देने चाहिएं।

अन्य सृजनात्मक क्रियाएं

बच्चों को रंग-बिरंगे कागजों, पैटर्न और डिजाइन, खिलौने, बुनाई, बागवानी, विविध प्रकार के तार, मिट्टी, सीपों, मोतियों, फूलों, बीजों,

बटनों, लकड़ी आदि की चीजें बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उनमें से कई में विज्ञान के सरल सिद्धांतों का प्रयोग भी किया जा सकता है। रंग, चुम्बक, प्रकाश, गर्मी आदि की भौतिकशास्त्रीय विशेषताओं के आधार पर कई मनोरंजन खेल-खिलौने बनाये व बनवाये जा सकते हैं। रुई, फलेक्स ऊन आदि भर कर खिलौने बनाये जा सकते हैं। रस्सी-सुतली आदि के उपयोग से भी कई प्रकार की आकर्षक वस्तुएं बनाई जा सकती है।

वस्तुतः बालकों के मनोरंजनार्थ क्रियाओं और रोचक वस्तुओं के निर्माण, संगीत, नृत्य-कला आदि की असीमित संभावनाएं हैं।